प्रकाशक—

श्री हरिहर औषधालय,

बरालोकपुर-इटावा।

मुद्रक—

पं० विश्वेश्वरदयालु जी वैद्यराज

अध्यक्ष-दी हरिहर प्रिंटिङ्ग काटेज,

बरालोकपुर-इटावा।

दो शब्द

पूर्व सूचितानुसार विचार था कि इस औषधि गुण-धर्म विवेचनात्मक निबन्ध को दो भाग में लिखकर समाप्त कर दूंगा, किंतु कई सुहृज्जनो के आग्रह से इसमें प्रत्येक धातूपधातु की विस्तार सहित शुद्धि एवं भस्म प्रक्रिया भी लिखनी पड़ी, अतएव इसका आकार-प्रकार भी बढ़ने लगा। आशा है अब यह सम्पूर्ण ग्रन्थ लगभग चार भागो में समाप्त हो जायगा। आगे उपधातु, उपरस, रत्नोपरत्नादि की भस्म प्रक्रिया सहित गुणधर्म, कतिपय सिद्धयोगों के गुणावगुण तथा मुख्य विषोपविष एवं काष्ठौषधियों का गुण-धर्म विवेचन होने वाला है।

इस द्वितीय भाग मे जो कुछ लिखा गया है, वह बहुत कुछ योग्यतापूर्वक जाच करके ही लिखा गया है। मराठी के 'औषधि गुण-धर्म शास्त्र' के प्रणेता महानुभाव वैद्य पञ्चानन गङ्गाधर गुणे शास्त्री का लेखक अत्यन्त कृतज्ञ है। कारण; उनके लेख एवं विचारो से लेखक को बहुत कुछ सहायता प्राप्त हुई है।

इसमें जो कुछ त्रुटियां एवं दोष हो उन्हे प्रेमी सज्जन कृपा पूर्वक सूचित करेंगे, ऐसी आशा है। कारण, औषधियों के गुण धर्मों का शास्त्र-प्रणाली युक्त विवेचन करना बहुत कड़ा एवं जवाबदारी का काम है। इसमें विचार विनिमय एवं ऊहापोह जितना

किया जायगा उतना ही आगे निश्चित परिणाम की प्राप्ति होना सम्भव है तथा इसी से आयुर्वेद की समुज्ज्वल उन्नति होकर, आधुनिक प्रागतिक काल में वह सबका शिरमौर हो सकता है।

आशा है विद्वान् वैद्य वृन्द मेरी अभ्यर्थना की ओर समुचित ध्यान देकर मुझे आगे के सेवा कार्य के लिये उत्साहित करेंगे।

शुक्ल मार्ग शीर्ष द्वितीया संवत् १९८७ } वैद्य कृष्णप्रसाद त्रिवेदी बी०ए०, डिगनघाट सी० पी०।

वन्दना
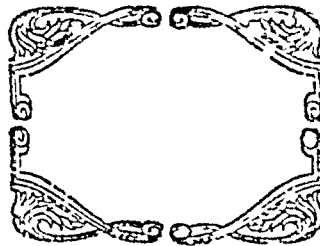
वन्देऽहं सर्व दातारौ भवानी शङ्करौ च तौ ।
अज्ञान तिमिर ध्वंसे चंडिका चन्द्रशेखरे ॥

रत्नाकर-औषधि अखिल,
है अपूर्व गम्भीर ।
तामें रत्न विचित्र को,
खोजत हैं मतिधीर ॥१॥

औषधि जो रस से भरी,
राखे शक्ति अपार ।
कांति वीर्य यशप्रद खरी,
नाशत रुज परिवार ॥२॥

करन विवेचन मन हरन,
यही ग्रन्थ निर्धार ।
विज्ञ जनो के हेतु यह,
कीन्हों है विस्तार ॥३॥

लेहु सुधार मतिवान सब,
भूल-चूक जो होय ।
कृष्णप्रसाद त्रिवेदि को,
क्षमा करहु सब कोय ॥

१-प्रकरण

कज्जली--कल्प।
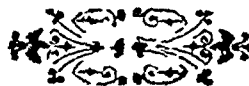
कज्जली कल्प में कज्जली अर्थात् पारद और गंधक के सम्मिश्रण युक्त औषधियों का समावेश किया जाता है। कज्जली (Sulphuret of mercury) शुद्ध पारद और शुद्ध गंधक सम भाग लेकर, एकत्र कर ४ पहर तक इतना घोटे कि निश्चिन्द्र हो जाय अर्थात उसमें पारद की कुछ भी झलक न दिखलाई पड़े कज्जल के समान काला वर्ण हो जाय। इसी की योजना अन्यान्य औषधियों में की जाने से कज्जली कल्प कहाता

है। यह कज्जली पुष्टिदायक, वीर्यबर्द्धक तथा नाना अनुपान योग से सर्व व्याधियों को हरण करने मे समर्थ है।×

साधारण से साधारण तथा बड़ी से बड़ी महत्वपूर्ण खल्वी औषधियो में कज्जली की योजना क्यो की जाती है? यह एक शंका होती है कि इच्छाभेदी के समान रेचक औषधि में तथा ग्रहणी कपाट, कामबोध, अगस्ति सूतराज इत्यादि रेचन गुण विरुद्ध अन्य रसायनिक औषधियो में भी इसकी योजना हम देखते हैं। रेचक, वामक, पाचक, स्तम्भक, हृद्य, दीपन, उत्तेजक इत्यादि प्रायः सब प्रकार की विरुद्ध तथा अविरुद्ध औषधियों मे न्यूनाधिक प्रमाण में हमे कज्जली की योजना करनी पड़ती है। इसका कारण क्या है? क्या इसमें कोई शास्त्रीय रहस्य है?

इसमें मुख्य रहस्य यह है कि कज्जली के योग से औषधियां निर्वीर्य नहीं होने पाती, सड़ती नही एवम् उनपर विकारी जंतुओ का कोई असर नही होने पाता। उदाहरणार्थ रसौत या रसाञ्जन को कुछ काल तक वैसे ही पड़ा रहने दीजिए, देखिये उसमें सड़न पैदा हो जायगी। वही देखिये कज्जली मिश्रित रसाञ्जन युक्त प्रद-

× शुद्ध सूतं गंधकश्च समं सम्मर्द्येद्दिनम्। निश्चन्द्रं कज्जली-भूतं ततो योगेषु योजयेत्। एषा कज्जलिका ख्याता बृंहणी वीर्यवर्द्धनी नानानुपान योगेन सर्व व्याधि विनाशिनी॥

—वैद्यक निघण्टु।

रारि रस× या प्रदर रिपु चाहे कितने भी दिन हो गये हैं, जैसे का तैसा रखा हुआ है किंचित भी निर्वीर्य नहीं हुआ है। यह कज्जली का प्रथम उपयोग या रहस्य है।

दूसरा रहस्य—कज्जली में पारद होने से वह क्षार तथा शहद के समान योगवाही है। जिन द्रव्यों के साथ उसका योग होता है उनके गुणों को बढ़ाती है। कभी-कभी उनके गुणों को

× प्रदरारि रस—

"रसं गंधं सीसं मृतमिति समं तैस्तु रसजम्। समानं सर्वैः स्यात्तुलित मपि लोध्र वृषरसैः ॥ दिनं पिष्टं नाम्ना प्रदररिपु रेषोऽपहरति। द्विवल्लः क्षौद्रेण प्रदरमपि दुःसाध्यमपि च।"

अर्थात्—शुद्ध पारद और गंधक की कज्जली कर उसमें सम भाग सीसा की भस्म, तीन भाग रसांजन (रसोत) और ६ भाग लोध का महीन चूर्ण मिलाकर अरूसे के रस के साथ एक दिन भर खूब खरल करे। बस, प्रदरारि रस तयार हो गया। इसकी मात्रा ६ रत्ती तक है, शहद के साथ प्रातः सायं सेवन करने से दुःसाध्य प्रदर (दोनों प्रकार का) Menorrhagia हो या (Leucorrhea) हो नष्ट होता है। अनुभूत है, बंगादि मिश्रित अन्य 'प्रदरारि रस' की अपेक्षा यह सरल और श्रेष्ट है।

—लेखक।

वृद्धि के साथ ही साथ अपना भी विशेष लाभदायक गुण प्रकट करती है।

कज्जली में शामकगुण की अपेक्षा उत्तेजक गुण कुछ अधिक है। अतएव ही कई अत्यन्त शामक गुण विशिष्ट एवं हृदय शक्ति को कुछ कम कर देने वाली औषधियो के साथ कज्जली का उपयोग करने से उनका शामक गुण कम हो जाता है और हृदय को जैसा चाहिये वैसा वे निर्बल नहीं कर सकतीं।

उदाहरणार्थ:—(महा) वातविध्वन्सन रस❀ में वत्सनाभ

❀ वातविध्वसन रस:- शुद्ध पारद, गधक की कज्जली में सीसा, रांगा, लोह, ताम्र और अभ्रक की भस्में तथा शुद्ध सुहागा, कालीमिर्च, ये सब एक-एक भाग और सोंठ, पीपल २-२ भाग लेकर एक पहर तक एकत्र मर्दन करे। पश्चात् वत्सनाभ साढे चार भाग शुद्ध करके मिलाये और घोटे फिर सोंठ, मिर्च, पीपल इन तीनो के क्वाथ की ३ भावनायें देकर यदि हो सके तो पुन. त्रिफला, चित्रक, भृङ्गराज, कूट, निर्गुण्डी, अर्क दुग्ध, अद्रक और नीबू इनमें से प्रत्येक के रस या क्वाथ की १-१ भावनायें अवश्य देवे। बस रस तयार हो गया। इसकी मात्रा २ रत्ती तक है। सर्व वातरोग, शूल, कफरोग, संग्रहणी, सन्निपात, मूढ़-गर्भ आदि रोगों को दूर करता है।

—लेखक।

(तेलिया) जो कि हृदयशक्ति का कम करने वाला है, अधिक प्रमाण में डाला जाता है, यदि इसके साथ कज्जली का योग न हुआ होता, तो उसका हृदय निर्बलकारी गुण प्रबल रहता किंतु कज्जली के कारण वह उतना प्रबल नहीं होने पाता।

तीसरा रहस्य—कज्जली में प्रमाथी गुण (अर्थात दोषपूर्ण सूक्ष्मातिसूक्ष्म स्रोतसों के अन्दर प्रविष्ट होकर, दोषों को अपने अपने रास्ते लगाना और स्रोतमार्ग को साफ करना) विशेष होने के कारण हम यथावश्यक गुणयुक्त औषधि का असर सूक्ष्म-से-सूक्ष्म स्रोतसों के अन्दर, इसके द्वारा पहुचा सकते हैं।

आयुर्वेदीय औषधियों के विषय मे आक्षेप रूप से कहाजाता है कि रसायनादिक अत्यन्त महत्वपूर्ण औषधियां, चूर्ण, गुटिका आदि घनस्वरूप मे होती है। द्रवस्वरूप मे बहुत ही कम हैं। यह सर्व विदित है कि द्रव (प्रवाही) द्रव्य की अपेक्षा घन द्रव्य शरीर में विलम्ब से शोषित होता है। अत्यन्त विकट प्रसंग मे जब कि विलम्ब घातक हो तब आयुर्वेदीय औषधियां अपना इष्ट कार्य एवं गुण शीघ्र नहीं बतला सकतीं। इस आपत्ति के निवारणार्थ आयुर्वेद शास्त्रकारो के पास कौन-सा उपाय है ?,

जवाब ? उपाय क्यों नहीं, आप जरा गौर से देखें तो आप को विश्वास हो जायगा कि हमारे दूरदर्शी ऋषि-महर्षियों ने कैसी गहरी खोज की हैं। आपकी आपत्ति के निवारणार्थ ही उन्होंने कज्जली की योजना की है। कज्जली युक्त औषधियां

यद्यपि द्रव द्रव्यों के समान व्यापक नहीं हैं, तथापि वे शीघ्राति-शीघ्र शरीर के सूक्ष्मातिसूक्ष्म भागो मे अवश्य व्याप्त हो जाती है। जिन्होने आयुर्वेदीय रासायनिक मात्रा के शीघ्र गुणकारी प्रभाव को देखा है, या अनुभव किया है वे विना किसी हिच-किचाहट के मुक्तकंठ से हमारी उक्त बात की ताईद करते हैं। कई पाश्चात्य डाक्टरो ने भी इस बात को माना है कि अति शीघ्र गुणकारी और हृद्य अंग्रेजी औषधियो की अपेक्षा, आयुर्वेदीय रासायनिक मात्रा कही अधिक शीघ्र और उत्तम काम करती है। जानते हैं आप, यह किस चीज का प्रभाव है? यह उसी काली मुलायम कज्जली का ही प्रभाव है।

दूसरा संशय कज्जली के विषय मे किया जाता है कि कज्जली के मूल द्रव्य, क्षार रूप न होकर, अपने मूल स्वरूप में ही नियोजित किये जाते हैं अतएव क्षारो (Alkaloids) की अपेक्षा यह अधिक शीघ्र गुणकारी और उपयोगी कैसे हो सकती है? उदाहरणार्थ हम देखते हैं वत्सनाभ का क्षार या वत्सनाभ के प्रभाव युक्त अन्य द्रव्यो का (Alkaloids) का क्षार अत्यन्त ही कम प्रमाण मे देने पर भी, शरीर मे उत्तम प्रकार से शीघ्र जैसा कार्य करता है, वैसा कार्य वत्सनाभ का अर्क या गोली से नहीं होता। अस्तु। इस संशय के समाधान में हमारा कहना इतना ही है कि हम यह मानते हैं कि मूल द्रव्य की अपेक्षा उसका क्षार शीघ्र प्रभावकारी होता है। किन्तु उसी

क्षार की क्रिया बाहर न होकर, रोगी के शरीर में प्राकृतिक रूप से जहां होती है वहां वह सहज में ही अधिक लाभदायक सिद्ध होती है। यह कज्जली के अचिन्त्य शक्ति का प्रभाव है कि शरीर में प्रविष्ट होते ही उसका सारभूत अंश (Alkaloids) सहज में ही शोषित होकर, उसका अन्य अनावश्यक अंश मल के साथ बाहर निकल जाता है। इस प्रकार अत्यल्प प्रमाण में भी कज्जली युक्त औषधियां, अन्य क्षार रूप औषधियों की अपेक्षा बड़ी अच्छा कार्य करती है।

जो कहा करते हैं कि रासायनिक औषधियां तो बहुत ही अल्प प्रमाण में आप देते हो वैद्यराज जी! आपकी यह राई बराबर मात्रा हमारे हाथी के समान शरीर में क्या काम करेगी? उनको हमारा उत्तर है कि भाई! बड़े भारी हाथी को एक छोटा सा तीक्ष्ण अंकुश ही बस है। आप ध्यान में रखिये कि कुछ औषधियां अपना उत्तम कार्य प्रमाण के बल पर करती है, और कुछ केवल अपने गुण के बल पर। उदाहरणार्थ दस्त के लिये यदि जैपाल, निशोथ, दन्ती आदि देना हो तो उसे यथोचित पूर्ण प्रमाण में ही देने से काम होगा।

नहीं तो कांखते बैठिये, दस्त खुलासा कभी न होगा वैसे ही वमन कराने वाली मदनफलादि औषधे उचित पूर्ण प्रमाण के बल पर ही अपना-अपना कार्य करती है। दूसरी औषधियां वे है जो केवल स्वगुण से ही उत्कृष्ट कार्य करती है। उनका पूर्ण प्रमाण

मे सेवन अनावश्यक है। वे जितनी अल्प मात्रा मे दी जाती हैं, उतना ही अच्छा काम करती है। होम्योपैथिक का भी यही सिद्धान्त है। उदाहरण के लिये देखिये, जब शरीर से रक्तान्तर्गत रक्त अणुओं की कमी हो जाती है, तब शरीर का वर्ण पीला पड़ जाता है, पाण्डुरोग कहा जाता है तथा ऐसी अवस्था मे संसार के प्रायः सभी वैद्यशास्त्र यही कहते हैं कि रोगी के शरीर में लौह का प्रमाण कम हो गया है, उसी लौह का सेवन करना चाहिये। अब कोई लौह को अधिक से अधिक प्रमाण मे देने को कहते हैं, तो कोई उसे कम प्रमाण मे देने का उपदेश करते हैं। अर्थात् किसी का ख्याल यह है कि लौह एक विशिष्ट प्रमाण में ही देने से अपना कार्य करता है, तो किसी की राय है कि लौह अपने स्वाभाविक लौह विशिष्टत्व गुण से ही अल्प से अल्प मात्रा में ही केवल अपनी उपस्थिति से ही इष्ट कार्य अर्थात् रक्तान्तर्गत लाल अणुओं की वृद्धि कर सकता है। हमारी भी यही राय है कि अधिक से अधिक प्रमाण से ही लौह की योजना करने से उक्त इष्टकार्य होगा तो यह बात नही है। उसका अनावश्यक अधिक प्रमाण शरीर मे शोषित न होते हुये मल के साथ निकल जाता है। हम यह नही कहते कि मल के साथ सभी लौह निकल जाता है। कुछ न कुछ यथावश्यक अत्यल्प अंश अवश्य शरीर मे शोषित होकर इष्ट कार्य को करता है। तात्पर्य इतना ही है कि अत्यधिक प्रमाण मे लौहादिक औषधियो का सेवन अनावश्यक

तथा हानिकारक भी है दूसरा एक उदाहरण 'सेंटोनाइन' × का लीजिये यदि इसे बड़ी से बड़ी मात्रा अर्थात् आधे से २ गुञ्जा तक खिलाई जाय तो उसका शोषण शरीर में न होकर मूत्र के साथ निकल जाती है। अत एव यदि केवल आधा गुञ्जा सेंटोनाइन थोड़ी सी शक्कर के साथ मिलाकर उसके समान ४ भाग कर लिये जाय और उनमे से भी एक ही भाग (अर्थात् आधे गुञ्जा का भी ¼ भाग दिया जाय) दिया जाय तो इष्ट कृमिनाशक कार्य सफलता पूर्वक होकर, किसी प्रकार की हानि नहीं होती। यही बात कई विषो के सम्बन्ध में देखी जाती है।

कज्जलि युक्त औषधियो में प्रायः ऐसे भिन्न भिन्न द्रव्यो का समावेश किया जाता है कि जिनके कारण उनका अत्यल्प प्रमाण

× 'सेंटोनाइन' यह एक पाश्चात्य कृमिघ्न औषधि है। यह एक तत्रोत्पन्न वृक्ष विशेष से निकाली जाती है। गंध और स्वादरहित चमकदार स्फटिक रूप से अंग्रेजी दूकानो में मिलती है। उसकी कृति यो है—सेंटोनाइन १२० ग्रेन शुद्ध शर्करा २५ औंस, गोंद चूर्ण १ औंस तथा अर्कोदक यथावश्यक मिलाकर खूब घोट-घांट कर मूंग जैसी गोलियाँ बना कर शीशियों में भरकर रक्खे। इसके सेवन से गोल कृमि बहुतशीघ्र तत्काल मर जाते है। साथ ही रेचक देदेने से वे सब मरे हुए कृमि मल के साथ निकल जाते हैं।

लेखक

ही युक्तियुक्त होता, है और कोई भी अनिष्ट परिणाम नहीं होने पाता। जैसा कि ऊपर कह आये है कज्जली योगवाही अर्थात् अन्य औषधि के प्रभाव को बढ़ाने वाली और अत्यन्त सूक्ष्म स्रोतसो मे प्रवेश करने वाली होने के कारण, उसे अत्यल्प प्रमाण मे सेवन करने से उसके साथ मिश्रित अन्यान्य औषधियो का जो कुछ सूक्ष्म प्रमाण शरीर मे जाता है वह सर्वांश मे ठीक-ठीक शोषित होकर, अपना इष्टकार्य सफलता पूर्वक सम्पन्न करता है।

अस्तु। अब कज्जली के विषय मे विशेष गुण विवेचन करना आवश्यक है।

कज्जली गुण—विवेचन।

जंतुघ्न, वृष्य तथा उत्तेजक ये गुण स्वाभाविक ही कज्जली मे देखे जाते है। आन्त्र-विकार कई प्रकार के इससे नष्ट होते है।

गलग्रन्थि या कंठशालूक + (Acute Tonsillitis) रोग मे जब कि गलग्रन्थि मे सूजन हो, वेदना होती हो तो

+ कोलास्थि मात्रः कफसंभवो यो ग्रथिर्गले कंटक शूकभूत।
खर. स्थिरः शस्त्रनिपातसाध्यस्तं कंठशालूकमिति ब्रुवंति॥

कभी ज्वर की अवस्था मे गलग्रथि के ऊपर के अंकुर (Follicles) विकृत हो जाते है। (Follicular Tonsillitis) या कभी—कभी गलग्रन्थि केअंतस्थ धातु मे दाह होने लगता है यही सदाह शोफ जब विद्रधि के स्वरूप को प्राप्त हो जाता है तब

कजली का उपयोग करे। किन्तु यदि सूजन गम्भीर हो, और अत्यन्त ही वेदना होती हो, जिसके कारण ज्वर चढ़ आया हो तो अन्य शोथघ्न औषधियों का उपयोग ठीक होता है। उदाहरणार्थ ऐसी अवस्था में ऊपर से रक्तचन्दन, वच या भिलावा का लेप करें और अन्दर से उष्ण जल की वाष्प से गला सेंकें। किसी-किसी को बार-बार जुकाम या सर्दी हो जाया करती है नाक बहने लगती है, गले के अन्दर खुजलाहट और खांसी होती है। कज्जली का सेवन करे। कज्जली ताम्बूल स्वरस (खाने के पान के रस के साथ) में मिलाकर चाटे। यदि जुकाम के कारण फुप्फुसों में दर्द पैदा हो गया हो, खांसते समय छाती को रोगी अपने हाथों से दबाये रखता हो उसकी छाती और पसलियों में सुई टोचने के समान रह-रह कर

उसे क्विन्सि (Quinsy) कहते हैं। यह रोग युवावस्था में विशेष होता है। तीव्र आमवात में या कभी-कभी आमवात के पूर्वरूप में भी यह देखा जाता है। अकस्मात् भी यह रोग हो जाता है। गल शुष्क उष्ण मालूम होना, शिरःशूल, जिह्वा मलीन, दुर्गन्धयुक्त श्वास, जबड़े के नीचे की ग्रन्थि सूजी हुई, ज्वर १२४ अंश तक इत्यादि लक्षण होते हैं। यह संसर्गज भी है। कभी-कभी चिरकारी और जीर्ण होकर वर्ष में कई बार यह रोग उसी रोगी को होता है उसे (Chronic Tons-

—लेखक

mata) मे भी उक्त प्रकार से मलहम बनाकर लगाने से लाभ होता है अथवा कज्जली, गोंद और थोड़ा जल घोटकर कपड़े की पट्टी पर लगाकर, इस पट्टी को मासकीलकों पर बांध देनेसे उनकी सूजन वगैरा शांत होती है।

प्रकारांतर से कज्जली का एक महत्व का योग यहां लिखकर इस कज्जली प्रकरण को समाप्त करेंगे:—

भटकटइया (कटेली), सभालू और करजुये के पत्तेके रस को एकत्र कर एक ठीकरे मे रखे। फिर उसमे शुद्ध किये हुये गंधक का चूर्ण मिलाकर मन्दाग्नि पर रखे। जब गन्धक पिघल जाय तब उसमें समान भाग शुद्ध पारद डालकर तथा जल्दी से मिलाकर नीचे उतार लेवे। पश्चात् खरल मे डालकर इतना घोटे कि कज्जल के समान स्याह हो जाय। ध्यान रहे खरल मे घोटने के पूर्व कटेली आदि के रस को छानकर अलग फेक देना चाहिये, केवल पारद मिश्रित गंधक का ही खरल मे डालकर घोटना चाहिये। वह श्रेष्ठ गुणदायक कज्जली तयार होती है।

इन्हें अंग्रेजी में 'कांडिलोमेटा' कहते है। हिन्दी में इन्हे मांसकीलक कह सकते हैं। —लेखक।

मांसकीलक:—"अन्तर्बहिर्वा मेढ्रस्य कण्डूला मांसकीलकाः पिच्छिलस्रवा योनौ तद्वच्च छत्रसन्निभाः। तेऽर्शास्युपेच्याघ्नन्ति मेढ्रपुंस्त्वभगार्त्तवम् ॥" —वाग्भट्ट।

इस कज्जली को सन्निपात ज्वर में एक रत्ती दे, उसमें जीरे का महीन चूर्ण १ मा० तथा सेंधा नमक १ माशा मिलाकर पान (ताम्बूल) में रखकर खाये और ऊपर से उष्णजल पीये। वमन में शक्कर के साथ सेवन करे, आमदोष में १ माशा गुड़ के साथ १ रत्ती कज्जली मिलाकर सेवन करे। क्षय में बकरी का दूध १ से २ रत्ती तक कज्जली मिलाकर दिन में ३ बार इसी प्रकार सेवन करे। रक्तातिसार में कुड़े की जड़ की छाल के साथ तथा खून की उल्टी होती हो तो गूलर के रस के साथ कज्जली सेवन करे। यह कज्जली सब प्रकार की व्याधि को हरण करने वाली, आयु-वर्द्धक तथा मृत्यु-शय्या पर पड़े हुये को भी जीवन-दान देने वाली है। रसराज सुन्दर में कहा भी है।

सर्व व्याधि हरश्चायं गन्धकः कज्जलीकृतः।
आयुर्वृद्धि करश्चैव मृतं चापि प्रबोधयेत् ॥

× नोटः—कज्जली के विशेष योग आगे परिशिष्ट प्रकरण में देखिये।

कज्जलि निर्मित त्रिगुणाख्य रसः—शुद्ध गंधक १ भाग और शुद्ध पारद २ भाग दोनों की कज्जली करके लोहपात्र में जरा सा घृत डाल कर उसमें इस कज्जली को मिला मन्दाग्नि पर पकाये। जब कज्जली पिघल जाय तब उसे ठण्डा करके पीस लेवे। पश्चात् उसमें समभाग हर्रे का महीन चूर्ण मिला शीशी में भर रखे। कम्पवात पर समर्थ्य है

पहिले दिन ३ रत्ती, दूसरे दिन ४ रत्ती इस प्रकार १-१ रत्ती बढ़ाते हुये २१ दिन तक खाये रोग दूर हो जाने पर छोड़ दे। यदि रोग दूर न हो तो २१ दिन बाद एक-एक रत्ती घटाते हुये २१ दिन तक खावे। प्रायः ६ सप्ताह में कंपवात दूर हो जाता है। रोगी घी, दूध और मिश्री सहित शाली चावलों का भात खाये और निर्वात स्थान में रहे।

(रसें० चिन्ता०) —लेखक।

❀ इति कज्जली प्रकरणम् ❀

अथ भस्म प्रकरणम्

२—प्रकरण

सुवर्ण भस्म ।

हमने भस्मों में सर्व श्रेष्ठ पारदभस्म के विषय में, उपोद्घात प्रकरण में यथाशक्ति सविस्तार हाल लिख दिया है। अब यहां स्वर्णादि लोह× तथा कुछ उपरसों की भस्मों के विषय में लिखा जाता है।

किसी भी धातु को बगैर शुद्ध किये मारना अर्थात् भस्म बनाना महा दोषपूर्ण कर्म है। अशुद्ध धातुओं की भस्म विष रूप

×रुक्मं रूप्यमयांसि शुल्वमुरगं वंगं घनं वर्तकम्।
घोषं लोहमिदं अयं च चरमं नाम्नोपलोहं जगुः॥

अर्थात्—सोना, चांदी, लोहा, तांबा, शीशा और रांगा (बङ्ग) अभ्रक पीतल कांसा यह लोह संज्ञक हैं, तथा कांसा, पीतल और घोष (पंचरसी धातु) इनको उपलोह कहते हैं। —आ० प्रकाश।

ही होती है। कारण, उनकी भस्म हो जाने पर भी उनके मूल दोष जैसे के तैसे कायम रहते हैं। इस प्रकार की अशुद्ध भस्मों के वर्तने से ही लोगों की श्रद्धा आयुर्वेदिक रसायन से हट गई है तथा यह महा भयंकर माना जाने लगा है। उपोद्घात प्रकरण में इस विषय पर उचित टीका-टिप्पणी कर दी गई है। अस्तु, अब यहां प्रत्येक धातु के मूल दोषों का स्पष्टीकरण, शुद्धिकरण तथा मारण, शास्त्रोक्त, स्वानुभूत तथा प्रतिष्ठित मान्यवर वैद्यो की अनुभूत विधियो के आधार पर ग्रथित की जाती है।

अशुद्ध सुवर्ण के दोष

सौख्यं वीर्यं बल हन्ति नाना रोग करोति च।
अशुद्धन्तु मृतं स्वर्णं तस्माच्छुद्धं तु मारयेत्॥

अर्थात्-अशुद्ध सोना स्वास्थ्य, वीर्य और बल का नाश कर अनेक रोगों को उत्पन्न कर देता है। ठीक प्रकार से जिसकी भस्म न हुई हो ऐसा मृत स्वर्ण भी उक्त विकारो को करता है।

इस सम्बन्ध में यह श्लोक ध्यान रखने योग्य है।

शुद्ध लोहं कनक रजतं भानु लोहाश्मसारं।
पूतीलोहं द्वितयमुदितं नागवंगाभिधानम्॥
मिश्रं लोहं द्वितयमुदितं पित्तलं कांस्यवर्तं।
धातुलोहे लुह इति मतःसोऽपि कर्मार्थे वाची।

लुह अर्थात् खींचना जो धातु रोगों को खींचकर निकाल बाहर करती है उसे लोह कहते हैं। —लेखक।

अतएव उत्तम रीति से शुद्ध किये हुए सुवर्ण की ही भस्म तैयार करना उचित है।

शुद्धि

शुद्धि तथा भस्म करने के लिये सुवर्ण, उत्तम लक्षणों से युक्त, खनिज + लेना चाहिये। इस प्रकार यदि लिया जावे तो 'तले तक्रे गवां मूत्रे' ※ आदि का प्रयोग उसकी शुद्धि के लिये करने का कुछ विशेष प्रयोजन नहीं। कहा भी है:—"......सुवर्णस्य शुद्धिर्नान्या हि विद्यते। तैले तक्रादि के या तु रूप्या—

×स्वर्ण की उत्पत्ति ५ प्रकार से मानी गई है-प्राकृत, सहज, (हिरण्यगर्भ ब्रह्मा जी के साथ जो उत्पन्न हुआ) वह्निज (अग्नि से उत्पन्न) पारद वेधी अर्थात् पारद के द्वारा कीमिया से बनाया हुआ और खनिज। इनमें से खनिज ही आज कल प्राप्त है शेष चारों दुर्लभ है। दिव्यौषधि और पारसादि मणि के स्पर्श से भी सुवर्णोत्पत्ति मानी जाती है।

×तैले तक्रे गवां मूत्रे कांजिके च कुलित्थ के।
त्रिधा विशुद्धिः स्यात्स्वर्णादीनां समासतः॥

अर्थात् अलग-अलग बर्तनों में तेल (तिली का) छाछ गोमूत्र, कांजी और कुलथी का काढ़ा रक्खे, पश्चात् सोना चांदी और तांबे के कंटक वेधी पत्रे बनाकर, आंग में लाल होने तक तपाकर प्रत्येक में तीन-तीन बार (कोई-कोई सात बार और कोई २१ बार बुझाते हैं) बुझावे।

दीनामुदाहृता ॥" (आ० प्रकाश)। कारण यह कि असली सोना प्रायः शुद्ध ही होता है, उसे वैसे ही जल के साथ घिसकर पिलाने से या सोने का वर्क शहद के साथ सेवन करने से लाभ-दायक है, विष-बाधा निवारक है ❀ किन्तु-यदि सोना में कुछ खोट हो मिश्रण हो तो उसे अवश्य ही कंटक वेधी पत्र बनाकर केवल तीन बार नहीं ७ या २१ बार तक, तैल तक्र, गोमूत्र, कांजी और कुलथी के काढ़े में प्रत्येक बार खूब तपा-तपा कर बुझाना चाहिये। कहा भी है:—

"तक्रे कांजिक मूत्रयोस्तिलभवे तैले कुलित्थाम्भसि।
स्याच्छुद्धं परिवर्त्य लोहमखिलं त्रिः सप्तधा वापितम् ॥

सुवर्ण शुद्धि प्रकार

बबई की मिट्टी (वाल्मीकि मृत्तिका), गृहधूम, गेरू, ईट का चूरा, और नवसादर अथवा (सेंधानमक) इन पांच प्रकार

❀ और भी कहा है—

पक्वं हेम रसायनं विदुरथापक्वंतु सद्यो विषं।
प्रध्वंसित्वचि बृंहणं कृमिहरं वर्ण्यं ज्वरिभ्यो हितम् ॥

अर्थात् पूर्ण शुद्ध या मृत सुवर्ण तो रसायन ही है इसमें तो कुछ शंका नहीं। किन्तु असली सोना यदि पूर्ण शुद्ध न हो तो भी वह विष बाधा तत्काल नष्ट कर सकता है, क्षय के रोगी को पुष्ट बनाता है, कृमि नाशक, कांतिवर्धक तथा ज्वर को हितकर है।

की मिट्टी (पञ्च मृत्तिका) को लेकर नीबू के रस में या कांजी में खरल कर सुवर्ण के पत्रो पर लेप कर। पश्चात् अंगीठी में गोबरी की आंच से तपा लेव, सुवर्ण शुद्ध होवेगा। यथोक्तम्—

वल्मीक मृत्तिका धूम गैरिकं इष्टिका पटुः।
इत्याद्या मृत्तिका पञ्च जम्बीरैरारनालकैः॥
पिष्ट्वा लेप्य स्वर्णपत्र श्रेष्ठं पुटेन शुध्यति। रसचंडाशु

२-प्रकार—बांबी (वल्मीक) की मिट्टी, गोबर की राख और सैंधव नमक इन तीनों को बिजौरा नीबू के रस में ५ दिन खरल करे। पश्चात् उस कल्क को स्वर्ण पत्रों पर लेप कर पुट-पाक पद्धति से लघुपुट में तप्त करने पर सुवर्ण शुद्ध हो जाता है। कहा है—

मृत्तिका मातुलुङ्गाम्लैर्भावितं पञ्चवासरम्।
सभस्मलवणं हेम शोधयेत्पुटपाकवित्॥ रसमंजरी

३-प्रकार—यदि सुवर्ण अच्छा न हो हीनवर्ण का हो तो उसके अत्यन्त पतले पत्रे करे। चूना और सेंधानमक इनको कांजी के साथ कल्क कर उन पत्रो पर लेप करे। फिर इन पत्रों को मिट्टी के सराव सम्पुट में रख सन्धि लेप अच्छी तरह कर गोवरी (कंडों) की छोटे से जगरे में या मिट्टी में या लघुपुट में आंच देवे इस प्रकार तीन बार पुट देने से वह सुवर्ण शुद्ध हो जाता है।

र० प्र० सुधाकर

४-प्रकार—सुवर्ण के बारीक पत्र करके किसी उत्तम सरावले में नीचे सैंधव नमक और गेरू का चूर्ण आधा रख उस पर पत्र रक्खे और पत्रो पर शेष नमक और गेरू का चूर्ण अच्छी तरह करके भट्टी मे आधे प्रहर रक्खे। सुवर्ण उत्तम वर्ण का शुद्ध हो जायगा। र० र० स०

५-प्रकार—उत्तम सुवर्ण लेकर मूसे मे रख, अंगारे पर रक्खे जब गल जाये तब उसे कचनार के पत्तों के रस में बुझाये। इस प्रकार तीन बार बुझाने से सुवर्ण शुद्ध हो जाता है।

सुवर्णमुत्तमं बन्हौ विद्रुतं निक्षिपेत् त्रिशः।
कांचनार रसे शुद्धं कांचन जायते भृशम् ॥ भा० प्र०

स्वर्ण भस्म विधि—आर्य वैद्यक मे सुवर्ण का उपयोग अत्यन्त प्राचीन काल में प्रचलित है। मालूम होता है, पहले सुवर्ण के अत्यन्त सूक्ष्म चूर्ण का ही सेवन किया जाता था। फिर जैसे जैसे प्रगति होती गई तैसे-तैसे सुवर्ण भस्म का उपयोग होने लगा। अभी भी सुवर्ण भस्म के स्थान में स्वर्ण वर्क देने की चाल देखने मे आती है। स्वर्ण के महीन चूर्ण की अपेक्षा, स्वर्ण वर्क शरीर में शीघ्र शोषित होता है, यह बात यद्यपि कुछ अंश में सत्य है, तथापि उसकी भस्म से जो लाभ होता है, वह वर्क से भी नहीं हो सकता। कारण स्पष्ट है कि शारीरिक सेन्द्रिय (Organic) कोषों में, निरीन्द्रिय (Inorganic)

वस्तु जैसे की तैसी अर्थात् अपने मूल स्वरूप में मिल जाना, एक रूप हो जाना सहज नहीं है।

सुवर्णादि धातुओं की भस्म विधि तीन मार्ग से की जाती है (१) पारद भस्म के योग से, (२) वनस्पति के संसर्ग से और (३) गंधकादि उपरस के योग से। इनमे से प्रथम मार्ग श्रेष्ठ, दूसरा मध्यम और तीसरा कनिष्ठ माना गया है।×

+पारद तथा गंधकादि के योग से स्वर्णभस्मः—

१-प्रकार—सुवर्ण से दुगुना पारद लेकर दोनो को अम्लरस (बिजौरा नीबू के रस) में खरल करे, इस मिश्रण को गोली के समान बनाकर एक सरावले में रक्खे। इस गोली के नीचे और ऊपर गंधक का चूर्ण खूब भर दे। दूसरा सरावला उस पर ढांक कर, सम्पुट ठीक २ बन्द कर दे। इस शराव सम्पुट को, कपड़ मिट्टी से अच्छी तरह सुरक्षित कर दे, फिर कम से कम ३०

× लोहाना मारणं श्रेष्ठं सर्वेषां रस भस्मना।
मूलीभिर्मध्यम प्राहुः कनिष्ठं गंधकादिभिः॥

+ नोट—वास्तव में इस औषधि गुणधर्म विवेचनात्मक पुस्तक मे प्रत्येक औषधि की क्रिया का वर्णन करना युक्ति संगत नही। इसमें तो केवल गुणधर्म की ही विवेचना होनी चाहिये। किन्तु कई महानुभावों की प्रेरणा से, लेखक को विवश होकर यथाशक्ति प्रत्येक औषधि का क्रियात्मक वर्णन भी करना पडता है। जिन पाठकों को यह न रुचे वे क्षमा करेंगे।

जंगली उपलो की आंच में, कुक्कुट ❀ पुट मे रख देवे (कुक्कुट पुट उस गड्हे को कहते हैं जो लम्बाइ चौड़ाई और गहराई में दो-दो बीता या १ हाथ हो। कोई-कोइ ६ अंगुल और कोई १६ अंगुल का मानते है। इसी गड्हे मे गोबरी भर कर वीच में सराव सम्पुट रख दिया जाता है) स्वांग शीतल होने पर सराव संपुट मे से गोली निकाल, पुनः खरल करे, पुनः गोली के समान बना, सराव-सम्पुट मे नवीन गंधक के चूर्ण के बीच रख, कपड़ मिट्टी कर, उसी कुक्कुट पुट मे उतनी ही गोबरी की आंच देवे। इस प्रकार चौदह बार करने पर, शुद्ध + निरुत्थ भस्म तैयार होती है। कोई-कोइ सुवर्ण और पारद सम भाग लेकर इसी

❀ स्वर्णरूप्यवधे ज्ञेयं पुटं कुक्कुटकादिकम्।
ताम्रे काष्ठादिजो वन्हिर्लोहे गजपुटानि च॥

+ शार्ङ्गधर मे आढमल्ल जी का कथन है—'निरुत्थताऽत्रात्यर्थ मूर्च्छना कथ्यते न तु स्वर्णस्य मृतिर्भवति।' अर्थात् स्वर्ण भस्म निरुत्थ होता है, इससे केवल इतना ही समझना चाहिये कि वह अत्यन्त ही मूर्च्छितावस्था में हो जाता है। स्वर्ण की एक दम भस्म नहीं होती। आधुनिक रसायन शास्त्रज्ञ भी ऐसा ही कहते है और जिसको हम निरुत्थ स्वर्ण भस्म कहते हैं उसे वे फिर से अपनी विविध रसायनिक क्रिया से जीवित कर देते है अथवा उसे सिद्ध कर देते है कि वह जीवित है, मृत नहीं। देखें हमारे विद्वान वैद्यमहानुभाव इस विषय पर क्या कहते है?

क्रिया से भस्म तैयार करते हैं। यह भस्म क्षय रोग हर बहुत हितकर है। —आ० प्र०।

आयुर्वेद में सुवर्णादि धातुओं की भस्म परीक्षा मित्रपंचक अर्थात् मधु, घृत, गुञ्जा, सुहागा और गुग्गुल को उक्त धातु भस्म के साथ मिश्रण कर, खूब आंच देने पर भी यदि उस भस्म के धातु कण न बनें, शुद्ध, साफ भस्म ही बनी रहे तो उसे निरुत्थ भस्म जानना ऐसा कहा गया है। उक्त स्वर्ण भस्म पर यह परीक्षा करके देखने पर, उसमे स्वर्ण के कण तो दृष्टि-गोचर नहीं होवे, फिर कैसे माना जाय कि वह निरुत्थ भस्म नहीं है। यह एक शंका है। यह शंका व्यर्थ है, केवल एकवार उक्त भस्म मे मित्रपंचक का योग देने से अवश्य स्वर्ण कण दिखलाई पड़ते हैं, वे नहीं दिखलाई देते ऐसा कहना भ्रम पूर्ण है आढ़मल्ल जी का कथन सत्य है। उक्त भस्म मे स्वर्ण केवल मूर्च्छित अवस्था में ही रहता है, कारण मित्रपंचक के योग से वह अवश्य जी उठता है। उसे यदि पूर्ण-तया निरुत्थ करता हो तो मित्रपंचक का योग देने के पश्चात उसे थूहर के दूध में घोटकर टिकिया बना, सुखा, संपुट में रख गजपुट देना चाहिये, पुनः मित्रपंचक का योग देकर देखे, यदि स्वर्ण जी उठा हो तो पुनः उक्त प्रकार से घोट कर गजपुट देवे, इस प्रकार जब तक नश्चंद्र न हो बार-बार फूकने पर अवश्य निरुत्थ भस्म प्राप्त होती है, इसमें शंका नहीं। —लेखक।

२—प्रकार—सुवर्ण को मूसे मे गलाकर, उसमें पारद और सीसा १६ वां भाग मिलाकर, खरल मे डाल बिजोरा नीबू के रस के साथ खूब खरल करे। पश्चात् उक्त विधि के अनुसार उसकी गोली-सी बना, सराव सपुट मे, गधक चूर्ण के साथ रख उक्त प्रकार के पुट में ७ वार फूंके। उत्तम भस्म होगी। नपुन्सकता दूर करने मे यह श्रेष्ठ है। फोड़ा-फुन्सी आदि त्वग रोगो को भी यह नष्ट करती है। जीर्णज्वर, क्षय, संग्रहणी, कास, श्वास, प्रमेह, प्रदर, अर्श, धातुक्षीणता तथा नेत्रों की कमजोरी मे यह भस्म एक से ४ रत्ती तक मक्खन और मिश्री के साथ सेवन करने से अपूर्व लाभ होता है।

३-प्रकार—शुद्ध स्वर्ण १ तो०, शुद्ध पारद (ध्यान रहे सब विधियो मे पारद शुद्ध ही लेना चाहिये) १ तो० दोनो की मृदु पिण्डी करे, और फिर शुद्ध गंधक २ तो० डालकर कज्जली करे। कुमारी रस संयोग से टिकिया बनाकर खुश्क होने पर, कुक्कुट पुट में फूंक देवे फिर स्वांग शीतल होने पर भस्म को निकाल लेवे। फिर इस भस्म मे ६ मा० शुद्ध हिगुल डालकर कुमारी रस के संयोग से टिकिया बनाकर, पूर्ववत आग दे। इसी तरह वार-बार ६ मा० हिगुल डालकर पूर्ववत आंच देवे, जब ११ बार मे ५॥ तो० हिगुल खतम हो जाय तब लाल वर्ण वाली मृदु भस्म शीशी मे रक्खें। कमजोरी, नपुन्सकता, वलीपलित, क्षय, प्रमेह आदि रोगो पर, मात्रा २ चावल से १ रत्ती तक, अनुपान-भेद से देवे।

—अनुभूतयोगमाला-धात्वांक।

४-प्रकार—पारा और गंधक दोनों सम भाग लेकर कज्जली करे, उसमें थोड़ा २ कचनार के पत्तों का स्वरस या कचनार की छाल का क्वाथ डालकर घोटे जब गाढ़ा २ लेप करने लायक हो जाय तब समान भाग स्वर्ण के पत्रों पर उसका अच्छी तरह से लेप कर देवे फिर कचनार की छाल को पीस उसके दो मूसे बनावे। एक मूस में स्वर्ण पत्र रख उसपर दूसरी मूस का ढाक कर दोनों की सन्धि सुचिक्कन मिट्टी से अच्छी तरह बन्द कर दे। इन मूसों का मिट्टी के सरावले में रख दूसरे से ढककर कपड़ मिट्टी कर दे, धूप मे सुखा ले। उक्त प्रकार के कुक्कुट पुट मे तीव्र आरने उपलो की आंच दे, इस प्रकार तीन बार पुट देने से स्वर्ण की उत्तम भस्म तैयार होती है। सम्पूर्ण रोगों पर अनुपान भेद से यह काम देती है।

—शार्ङ्गधर।

५-प्रकार—स्वर्ण के पत्रों पर कबूतर अथवा मुर्गे की बीट का लेप करके, उन पत्रों के समान भाग गंधक का चूर्ण मिट्टी के सरावे में थोड़ा सी बिछाकर उस पर प्रत्येक पत्र रखता जाय और गन्धक चूर्ण फैलाता जाय। इस प्रकार सब पत्रों को रख-कर ऊपर से शेष गंधक चूर्ण अच्छी तरह फैलाकर, दूसरे सरा-वले मे ढाक कर कपड़ मिट्टी कर धूप में सुखाये, बड़े २ पांच उपलों की आंच दे इस प्रकार ७ पुट देकर, दूसरी बार ३ - उपलों

के बीच में रखकर फूंक दे, उत्तम भस्म होती है। यह मधुर कुछ कड़वी, स्निग्ध, शीतल और भारी होती है। यह बुद्धि और स्मरण शक्ति को बढ़ाने वाली तथा विष बाधा निवारक रसायन है।

—शार्ङ्गधर।

६-प्रकार—मनसिल और सिन्दूर समभाग लेकर महीन चूर्ण करे। इस चूर्ण को आक के दूध की ७ वार भावना देवे। प्रत्येक वार भावना देकर धूप मे सुखा लेना चाहिये।×

पश्चात् स्वर्ण को मूसा मे गलाकर उस पर उक्त चूरण सोने के समभाग डालकर इतनी तीव्राग्नि दे कि जिसमें सब चूरण उसी

× भावना देने का प्रयोजन—भावना देने में तीक्ष्ण क्षार भूयिष्ट द्रव्यो की योजना की जाती है, जिसके कारण धातु पर जब पुट या अग्नि संस्कार किया जाता है तब वह अधिक सूक्ष्म तथा उसकी मूल कार्य कारिणी शक्ति की अधिक वृद्धि होती है इनके मारक द्रव्यों का संसर्ग जैसे और जितने प्रमाण मे धातु के साथ होता जाता है वैसे वे धातु के अत्यन्त सूक्ष्म परमाणुओ मे प्रवेश कर उसे सेन्द्रिय बनाते जाते है। इस प्रकार उस धातु की भस्म सेन्द्रिय होकर शरीर के रग २ मे प्रविष्ट हो, शीघ्र ही अपने लाभदायक कार्य को प्रकट करने के लिये समर्थ होती है। हम भावनाओ और पुटो के विषय मे आगे 'अभ्रक' प्रकरण में सविस्तार लिखेंगे।

—लेखक।

में एक रस हो जाय। इस प्रकार ३ बार करने से उत्तम स्वर्णभस्म हो जाती है।

वनस्पति योग से स्वर्णभस्म—मकरध्वज बनाने के पश्चात् जो अर्द्धपक्व सुवर्ण नीचे रह जाता है इसे अच्छी तरह बार २ जल से धोकर निर्मल कर ले फिर उसमे चतुर्थांश शुद्ध पारद मिलाकर तुलसी स्वरस के साथ खूब मर्दन करे। यह मर्दन क्रिया लगभग १ मास तक जारी रहे फिर उसकी टिकिया सी बनाकर, सम्पूर्ण शुष्क कर सराव सम्पुट में गजपुट की अग्नि देवे, फिर निकाल कर केवल तुलसी स्वरस से ३ दिन मर्दन कर पूर्ववत् गज पुट की अग्नि दे। इस विधि से २ से ३ पुट मे लाल वर्ण की उत्तम गुणकारी भस्म होती है।

—अनुभूतयोगमाला।

२-प्रकार—१ तो० सोने के बुरादे में १० तोला कांटेदार चौलाई का स्वरस मिलाकर खरल मे खूब घोंटे, पश्चात् उसे भर-कर तथा दूसरे मूसें से ढांक कर संधि मुख अच्छी तरह बन्द कर दे। एक ही बार में भस्म हो जाती है, यदि न हो तो कम से कम ३ वार में अवश्य उत्तम भस्म हो जाती है। इसी प्रकार मुंडी के पत्र-स्वरस के योग से या बकायन के पत्तो की लुगदी के योग से भी स्वर्ण भस्म की जाती है य। कांचनार के पत्र-स्वरस से भी यह क्रिया सम्पन्न हो सकती है।

नोट—ध्यान रहे सुवर्ण भस्म उत्तम तैयार होनी चाहिये। अर्धपक्क या अर्धमृत स्थिति की भस्म व्यर्थ होती है, वीर्य और बल का नाश करती है अन्यान्य रोगों को उत्पन्न कर देती है। कभी २ मारक हो सकती है। कहा है—

"असम्यङ्मारितं स्वर्णं वलं वीर्यं च नाशयेत्।
रोगान् करोति मृत्युञ्च तद्धन्याद्यत्नतस्ततः॥"

गुणधर्म विवरण—स्वर्ण भस्म का मुख्य कार्य हृदय को शक्ति पहुँचाना तथा चिरकालीन रोग जंतुओं को नष्ट करना है। विष की शान्ति के लिए इसका विशेष उपयोग होता है। पेट में गये हुये विष के तीव्र असर का यह कम कर देती है। धीरे २ शरीर को निर्विष कर शुद्ध कर पूर्ववत् सुदृढ़ और बलवान् बनाती है।

सुवर्ण अन्य धातुओं के समान मलयुक्त न होने से तथा शरीर के अविकृत रक्त में जो विकाशित्व, प्रसन्नत्व, स्निग्धत्वादि गुण हैं ये सब गुण सुवर्ण में स्वाभाविक होने से वह शरीरान्त-र्गत रक्त के तत्तद्गुणों की वृद्धि करता है, उसे शुद्ध तथा चैतन्य करता है। अन्य धातु के समान शल्य रूप से वह कभी शरीर में नहीं बना रहता।

उदरस्थ स्थावर विष की बाधा निवारणार्थ हमें दो प्रकार की खटपट करनी पड़ती है। एक तो है वमन विरेचन इत्यादि द्वारा उस विष को बाहर निकालना और दूसरे है विष का प्रति

संग्रहणी-में सुवर्ण भस्म की क्रिया दो प्रकार की होती है, एक जन्तुघ्न क्रिया, और दूसरी सपूरण क्रिया। इसकी जन्तुघ्न क्रिया के विषय में, जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, उसी प्रकार संग्रहणी विकार को बढ़ाने वाले जन्तुओं को यह नष्ट करती है, तथा संग्रहणी के कारण क्षीण हुये शरीरान्तर्गत अवयवों की पूर्त्ति कर उन्हें अपना-अपना कार्य करने में समर्थ बनाने का भी कार्य यह करती है।

सुवर्ण भस्म उत्तम वृष्य (Best Aphrodisiac) होनेके कारण इसके सेवन से अण्डकोषों को शक्ति प्राप्त होती है। शुक्र-प्रणाली उत्तेजित होती है। इसी गुण के कारण इसकी प्रसिद्धि सर्व प्रथम हुई थी। वसन्त कुसुमाकरादि+ शक्तिवर्द्धक औषधियों में इस की योजना इसी गुण के कारण की जाती है।

+वसन्त कुसुमाकर—प्रवाल, पारद भस्म, मौक्तिक भस्म, अभ्रक भस्म चार-चार भाग सुवर्ण भस्म और रौप्य भस्म दो-दो, भाग लोह भस्म, नाग भस्म और वंग भस्म तीन-तीन भाग लेकर उत्तम खरल में डाले। उस में केला, अडूसा, हल्दी, सांटा (ईख), कमल और मालती पुष्प प्रत्येक के रस स्वरस की सात-सात भावनायें देवें फिर दूध तथा मलयागिरि चन्दन की भी ७ भावनायें देने से उत्कृष्ट वसन्त कुसुमाकर नामक रस तैयार होता है। अनुपान भेद से इसे कई रोगों पर भी दे सकते हैं। सर्व प्रकार के क्षय रोगों पर शहद और काली मिर्च या

सुवर्ण भस्म के विशेष अनुपान—बल पुष्टि के लिए शंखाहूली के रस के साथ शरीर में शुद्ध वीर्य की वृद्धि के लिए विदारी कन्द के साथ देना चाहिये। पुनर्नवा की जड़ के चूर्ण के साथ सेवन कराने से नेत्ररोग, कुटकी के चूर्ण के साथ देने से दाह

छोटी पीपल के चूर्ण के साथ, प्रमेह में हल्दी चूर्ण, शहद या शक्कर के साथ, प्रबल रक्त-पित्त पर उत्तम श्वेत चन्दन के क्वाथ और शकर के साथ, शक्ति कामोद्दीपन तथा शांति के लिए कलमी छोटी इलायची, तमाल पत्र, कृष्णागेरू, और चन्दन के महीन चूर्ण के साथ, वमन पर शंखपुष्पी (शंखाहूली) रस के साथ, अम्लपित्त पर शतावरी का रस शहद और मिश्री के साथ देवे। अन्य रोगों पर भी यथाशक्ति अनुपान से इसे दे सकते हैं।

—लेखक।

× त्रिदोष (सन्निपात) शमनार्थ—स्वर्णभस्म, शुद्ध पारद और गंधक तीनों सम भाग लेकर कज्जली बना उसे ग्वारपाठे के रस के साथ एक दिन १२ घंटे घोटकर गोला सा बना लेवे। उसे सुखाकर सम्पुट में बन्द कर लघु पुट में फूंक देवे। स्वाँग शीतल होने पर रस को निकाल तथा पीस शीशी में भर रखे। इसे २ रत्ती की मात्रानुसार शहद या अदरक के रस के साथ सेवन करने से सन्निपात ज्वर अवश्य नष्ट हो जाता है। अनुभूत है, यह योग रस प्रकाश सुधाकर का अत्युत्तम है।

—लेखक।

रोग, कालीमिर्च, लौंग और सोंठ के चूर्ण के साथ देने से ज्वर, सन्निपात तथा उन्माद रोग दूर होता है। प्राय: किसी भी भयंकर रोग से मुक्त होने के लिए सुवर्ण भस्म को आमले का चूर्ण और शहद मिलाकर देवे।

अशुद्ध या कच्ची स्वर्णभस्म किसी के खाने में आ गई हो तो मिश्री के चूर्ण मे हरड़ का चूर्ण मिलाकर दिन में २-३ बार २-२ माशा की मात्रा मे ३ दिन तक खाने से उसका दोष परिहार हो जाता है।

❀ इति स्वर्ण प्रकरणम् ❀

रौप्य (चांदी)

उत्तम लक्षणों से युक्त, खनिज चांदी, भस्म क्रिया के वास्ते एवं औषधि कार्यार्थ काम में लेनी चाहिये।❀ अशुद्ध चांदी या

❀ सहज, खनिज तथा कृत्रिम भेद से चांदी के तीन प्रकार है। कैलाशादि दैवी पर्वतों पर जो चांदी मिलती है उसे सहज कहते है। इसके स्पर्शमात्र से ही मनुष्य रोग मुक्त हो जाता है। हिमालयादि पर्वतों की खदानों मे जो चांदी मिलती है उसे खनिज और जो रांगा तथा पारे के योग से बनाई जाती है उसे कृत्रिम कहते हैं।

उसकी भस्म आयुष्य, वीर्य, बलको नष्ट करती है तथा ज्वर, मला वरोध आदि कई विकारोंको नष्ट करती है। अतएव अन्य धातुओं के समान चांदी की भी शुद्धि अवश्य कर लेनी चाहिये।

१-शोधन प्रकार—मुख्य शुद्धि तो तेल, तक्र, गोमूत्र, आरनाल या कांजी और कुलथी के क्वाथ में अर्थात प्रत्येक में चांदी को गलाकर सात वार बुझाने से हो जाती है। किंतु, इतनी खटपट न करनी हो चांदी के पतले २ पत्र करके आंच में खूब तपायें और अगस्त (हथिया) के पत्तों के रस में ३ वार बुझाने से, या

अशुद्ध रजत भस्म के दोष—

"तारं शरीरस्य करोति तापं विड्बन्धतां यच्छति शुक्र नाशम्।
वीर्यं बलं हन्ति तनोश्च पुष्टिं महागदान् पोषयति ह्यशुद्धम्॥"
आ० प्रकाश।

उत्तम चांदी वह है कि जो वजनदार, चिकनी, जिसका मुलायम श्वेतवर्ण की, अग्नि में तपाने से या घन से पीटने पर रंग बदलता नहीं वही चन्द्र के समान तेजस्वी चांदी गुणदायक होती है।

योग रत्नाकर में अशुद्ध चांदी के विषय में लिखा है।—

"अशुद्धं रजतं कुर्यात् पाडु कण्डु गल ग्रहान्।
विबन्ध वीर्य नाशं च बलहानि शिरोरुजम्॥"

अर्थात्—अशुद्ध रौप्य भस्म सेवन करने से पांडु रोग, खुजली, कण्ठ में रुकावट, कब्ज, वीर्यनाश, बलहीन और सिरदर्द इतने विकार शरीर में उत्पन्न हो जाते हैं।

मालकांगनी के तेल में ३ वार वुझान से अथवा चांदी का गलाकर चमेली के पत्तो के रसमें ७ वार वुझाने से चादी शुद्ध होती है।

२-शुद्धि प्रकार—एक मिट्टी के सरावले में राख और चूना भरकर मध्य भाग में चांदी और समभाग सीशा रखकर भट्टी में फूंक दे। जब सब शीसा गल जाय तब चांदी शुद्ध होती है। अथवा—सुहागा या पलास के क्षार में या नीबू रस में अथवा इमली के रस में चांदी के पतले २ पत्र करके ४ पहर-तक पकाये चांदी निर्दोष हो जायगी। अथवा इतना भी न हो सके तो चांदी के पत्रों को गंधकाम्ल (Sulpharic acid) तेजाब में डाल दे, जब वह उसमें गल जाय तब उसे स्वच्छ जल से खूब धो डालें बस, चांदी शुद्ध हो जायगी। किंतु ध्यान रहे इस तेजाब के द्वारा शुद्ध की हुई चांदी की अपेक्षा उक्त प्रकारो से शुद्ध की हुई चांदी श्रेष्ट होती है।

शुद्ध की गई चांदी के गुण—शीतल, वृष्य, प्रमेहनाशक, वात, पित्त और श्वेत कुष्ठ नाशक एवं बल, वीर्य वर्द्धक है। शुद्ध चांदी के वर्क मुरब्बा आमला पर लपेटकर रोज सवेरे और शाम सेवन करने से दाह शांत होकर अशक्ति दूर होती है। पान के बीड़े पर लपेट कर खाने से ओज तथा कांति बढ़ती है, ध्यान रहे शुद्ध स्वर्ण को यदि अपक्व स्थिति में भी हो तो रोगी को देने में भी कुछ विशेष हानि नहीं होगी, किन्तु चांदी अपक्व स्थिति

में रोगी को कदापि न देवे और यदि चांदी पक्व अर्थात् पूर्ण-भस्म की हुई हो, तो भी उचित संयोग रहित उसका सेवन, ताम्रभस्म के समान न करे अर्थात् जिस प्रकार ताम्रभस्म अकेली भी दी जा सकती है, वैसे रौप्यभस्म अकेली नही देवे। उदाहरणार्थ रौप्यभस्म श्वित्र कुष्ठ को हरण करती है, अतएव उसे पारद भस्म आदि अन्य औषधियो के साथ सेवन करावे। केवल रौप्य-भस्म ही सेवन कराना ठीक नहीं। कहा है:—

अपक्वरजतं नैव संयोज्यं स्वर्णवद्गदे।
पक्वभस्मापि तन्नैव योज्यं ताम्रादिभस्मवत् ॥
अभावाद्व्यवहारस्य किंच श्वित्रहरं हितत्।
इति लोक प्रसिद्धिस्तु तस्माद्योज्यं रसादिषु ॥

—आ॰ प्रकाश।

रौप्य भस्म क्रिया

(१) हिंगुल, सुवर्ण माक्षिक, और गंधक समभाग लेकर नीबू के रस में खरल करे, जब खूब गाढ़ा लेप करने योग्य हो जाय, तब शुद्ध चांदी के पत्रों पर लेप करके, बड़े मूसे में या सराव संपुट में रख, गजपुट में फूंक देवे। उत्तम भस्म तैयार होती है।

(२) चांदी के पत्रे चार भाग, और शुद्ध हरिताल १ भाग लेवे। प्रथम हरिताल को जंभीरी नीबू के रस मे खूब गाढ़ा-गाढ़ा घोटे. फिर चांदी के पत्रो पर उस[illegible] करके सुखा लेवे। पत्रों को संपुट में रक्खे, चांदी के [illegible] गंधक, पत्रों के नीचे

और ऊपर अच्छी तरह बिछा देवें, और संधि लेप करके गजपुट में फूंके देवे। अथवा-उक्त क्रिया में १ भाग हरिताल और २ भाग चांदी के पत्र लेकर, उक्त क्रियानुसार लेपादि करे, तथा गंधक संपुट में न डालते हुये वैसे ही गजपुट में १४ बार फूंकने से उत्तम भस्म होती है ×।

(३) शुद्ध सुवर्ण माक्षिक और शुद्ध गंधक समभाग लेकर आक (अर्क) के दूध में कल्क कर समभाग चांदी पत्रों पर लेप करे, तथा सराव संपुट में रख कपरोटी कर एक गजपुट की अच्छी आंच देवे उत्तम भस्म तैयार होगी+ । अथवा-हरिताल,

---

+केवल एक या तीन बार पुट देने पर भी भस्म हो सकती है। किन्तु वह उतनी प्रभावशाली नहीं होती जितनी १४ अग्नि पुट की होती है। ध्यान रहे प्रत्येक पुट के बाद हरिताल का योग देते रहना चाहिये।

—यदि एक बार में भस्म न हो तो धैर्य न छोड़ कर कुछ अधिक पुट देवे।

×अथवा—शुद्ध चांदी के पतले पत्रों को समान भाग शुद्ध सुवर्ण माक्षिक के चूर्ण के साथ नीबू के रस में घोट कर टिकिया सी बना सुखा लेवे। तदनन्तर सराव संपुट में बंद कर गजपुट में फूंक देवे। इसी प्रकार नीबू के रस में घोट कर २० पुट देने से चांदी की उत्तम भस्म हो जाती है।- इसमें स्वर्ण माक्षिक बार-बार मिलाने की जरूरत नहीं, केवल प्रथम बार ही मिलाना

गंधक और चांदी के पत्रों को नीबू के रस में खूब एक प्रहर तक खरल कर, तथा सराव सम्पुट देकर, तीन चार अग्निपुट देने से भी उत्तम भस्म तैयार होती है। ध्यान रहे हरिताल, गंधकादि हमेशा शुद्ध ही लेना चाहिये अन्यथा उनकी अशुद्धि से चांदी की भस्म बेकार हो जायगी।

(४) हरिताल को जल में घोट कर दो टिकिड़ियां अच्छी लम्बी चौड़ी बनावे। फिर हरिताल के समभाग शुद्ध चांदी के पत्रों को बीच में रख, ऊपर नीचे उक्त टिकियों को अच्छी तरह जमा कर सराव सम्पुट में बन्द करे तथा १० सेर उपलों की अग्नि देवे। एक ही पुट में मटियाले रंग की भस्म तैयार हो जायगी। जिसकी मात्रा एक रत्ती मलाई या मक्खन के साथ सेवन करने से शुक्रज रोग नष्ट होकर कांति बढ़ती है। —सिद्धप्रयोग

(५) चांदी के समभाग पारद और गंधक लेकर कज्जली करें फिर इस कज्जली को ग्वारपाठे के रस में गाढ़ा खरल करें चांदी के पत्रों पर इस कज्जली कल्क का लेप कर सुखा लेवें। पश्चात् सराव सम्पुट में रख, सन्धि लेप कर ३० उपलों का गजपुट देवे। इस प्रकार दो अग्निपुट देने से शीघ्र ही प्रायः श्वेत भस्म तैयार होती है। —आयुर्वेद प्रकाश

नोट—सम्पादक अनुभूत योगमाला का कथन है कि इसी भस्म को दही और किंचित नवसादर के साथ घोटकर ५ बार अग्नि पुट दी जाय तो श्वेत भस्म हो जायगी तथा मेंहदी पत्र

स्वरस में रौप्य वर्क गर्म कर ४०-५० बार बुझा उसमें पारद १० दशमांश मिला पिट्ठी करे, मेंहदी स्वरस से, और मेंहदी की लुगदी ही में रख ३ बार फूंक देने से निश्चय श्वेतभस्म होती है।

(६) चांदी के छोटे-छोटे पत्रों पर कबूतरकी विष्टा का लेप कर देवे। फिर सरावले में, बीच में पत्रो को रख, नीचे ऊपर गन्धक बिछा कर दूसरा सरावला ढांक देवे तथा संधि लेप अच्छी तरह कर गजपुट मे फूंक देवे, इस प्रकार ७ बार करने से भी उत्तम भस्म श्यामवर्ण की तैयार होती है। इसकी मात्रा आधे से १ गुञ्जा तक की है।

इसके सिवाय बला (चिरैंटी) के पत्रा की लुगदी, श्वेत कनेर के फूलों का रस तथा लुगदी, सरसो के फूलो की लुगदी; खट्टे अनार की लुगदी, सौंफ या अजवायन के अर्क और उनकी लुगदी, तमाखू का रस और उसकी लुगदी, जामुन के पत्तो का रस और उसके कच्चे फलों के छिलकों की लुगदी, गोरखमुण्डी और जामुन के पत्तो की मिश्रित लुगदी, कचनार पत्र की लुगदी, हल्दी की लुगदी, गूमा (द्रोणपुष्पी) का रस और उसकी लुगदी, इत्यादि कई वनस्पतियो के रस और लुगदी के योगो से चांदी की भस्म तैयार होती है। किन्तु यह भस्म निम्न श्रेणी की होती है।

गुणधर्म—वात प्रधान रोगों पर-कलायखंज (Locomotor Ataxy) पक्षाघात आदि पुराने रोगों पर रौप्य भस्म अच्छा

कार्य करती है, कारण; शिरा तथा स्नायुओं को शक्ति प्रदान करने का इसमें मुख्य गुण पाया जाताहै। रौप्यभस्म वातवाहक नाड़ियों को शामकत्व गुण प्रदान करने के कारण इसका उपयोग अपस्मार तथा उन्माद की तीव्रावस्था मे तथा शिरागत, वातप्रकोप जन्य शूल शिराजाढय, संकोच, अन्तरायाम (Emprosthotonus) बाह्यायाम (Opisthotonus) आदि रोगों पर अच्छा होता है।

अति श्रम, अति जागरण, वाचन, मनन, भय, शोकादि के अतिरेक के कारण वात प्रकुपित हो जाने से मस्तिष्क निर्बल हो गया हो, थकावट, वेहोशी, चक्कर आदि लक्षण हो तो रौप्यभस्म का उपयोग बहुत अच्छा होता है। ध्यान रहे यदि पित्ताधिक्य से उक्त वेहोशी, चक्कर आदि लक्षण हो तो रौप्यभस्म के स्थान में मौक्तिक भस्म देना ठीक होता है किंतु स्त्रियों की उन्मादावस्था में चाहे वात की या पित्त की अधिकता हो, रौप्यभस्म अच्छा काम देती है।

यदि वात प्रधान कास (खांसी) हो, रूखी खासी वेदना युक्त आती हो, गला तथा जीभ सूख जाती हो, जीभ में छाले पड़ गये हों तो रौप्य भस्म का सेवन लाभदायक है।

यदि समान वायु के दूषित हो जाने से हाजमा बिगड़ गया हो, कब्ज बनी रहती हो तो रौप्यभस्म का सेवन वात की गति को रास्ते पर लाकर जठराग्नि को प्रदीप्त कर देता है।

पित्त प्रधान रोगों पर—पित्तजन्य मूर्च्छा, दाह, ज्वर, उदर-रोग, चक्कर, अतिसार, पाण्डु, आदि रोगों पर भी रौप्य लाभ पहुँचाता है।

अम्लपित्त हो जो कि बीच-बीच में बन्द होकर फिर से प्रबल रूप में प्रगट होता हो, आमाशय एवं कोष्ठागत वातनलिकायें क्षुब्ध होने से बार-बार इसका जोर बढ़ता हो, अथवा उदर वृद्धि के कारण अम्लपित्त के लक्षण होते हों जिसमें विशेषतः पेटमें अधिक दर्द होता है। कुछ भी न खाते हुये अधिक प्रमाण में वमन होती है यदि कै स्वयं न हो तो रोगी पेट को मसलते हुये किसी न किसी प्रकार कै करने का प्रयत्न करता है। अर्थात् कै हो जाने पर कुछ आराम मालूम होता है यदि ये लक्षण हों तो रोगी को धमासा (दुरालभा) के काढ़े के साथ रौप्य भस्म का सेवन कराने से धीरे २ पेट में रक्त का संचार होने लगता है। शिथिल शिरायें संकुचित होती हैं। यदि शैथिल्य और अशक्ती अत्यधिक हो तो वंगभस्म के साथ इसका सेवन अच्छा होता है।

पांडुरोग—में भी उपयोगी है किंतु शर्त यह है कि शरीरान्तर्गत रुधिर के रक्त कणों की कमी किसी मनोव्याघात् शोकादि मानसिक चिंताओं के कारण हो।

उपदंश—या सूजाक के विष के कारण किसी-किसी रोगी के अंडकोष अथवा अंडकोष की नलिकायें शुष्क हो जाती हैं।

नपुंसकत्व प्राप्त होता है। ऐसी अवस्था में रौप्यभस्म वृष्य या बल्य होने के कारण अण्डकोषों की शुष्कता, संकोचादि को दूर कर पुष्टता पहुँचाता है।

काथ—(Gangrene) यह एक पूतीभवन क्रिया है जो शरीर के किसी भाग के मृत, सड़ जाने या विषाणीजंतु के कारण उत्पन्न होता है, काथ उत्पन्न होने के प्रारम्भ में जिस भाग में वह उत्पन्न होता है उस भाग में अत्यन्त जलन और वेदना होती है। फिर शनैः २ वह भाग सड़ने लगता है। अर्थात् उस भाग के चैतन्याणु (Livnigcells) सड़ते हैं।× इस रोग में रौप्यभस्म लाभदायक है।

वाय विशेषतः शुक्रक्षय के कारण या मूत्र में क्षारत्व अधिक होने से यदि पेशाब (मूत्र) करते समय मूत्रमार्ग में जलन एवं विदाह हो, मूत्र थोड़ा २ उतरता हो, अल्प प्रमाण में होता हो तथा यह विकार चिरकालीन हो गया हो तो रौप्य-भस्म अच्छा कार्य करता है। कई अवसरों में भी इसका उपयोग करते हैं, किंतु जैसा चाहिये वैसा लाभ नहीं होता।

× कोथ के शुष्क और आर्द्र ऐसे—दो भेद हैं। शुष्क कोथ में वह भाग श्वेतता युक्त पीले वर्ण का, शीतल, गति और चैतन्यता रहित शुष्क हो जाता है। आर्द्रकोथ में प्रथम लालवर्ण की शोथ उत्पन्न होती है। फिर उस पर फुन्सियाँ होती हैं। यह बहुत पीड़ा पहुँचाती है। प्रमेह, उपदंशादि रोगों में कोथ होता है इसमें प्रायः वात और कफ दूषित होता है। —लेखक।

अरुचि—भोजन करने की बिलकुल इच्छा न होना, भोजन के नाममात्र से ही मन में ग्लानि उत्पन्न होना, यदि ये लक्षण चिंता, शोकादि. मानसिक विकारों के कारण या किसी अन्य वात प्रकोपी कारणों से हो, रौप्यभस्म कुछ थोड़े सुवर्णभस्म और गुर्च सत के साथ देना लाभदायक है।

अजीर्ण—यदि उक्त अरुचि कई दिनों के अजीर्ण विकार से हो, पेट तना हो, आध्मान कब्जी हो तो रौप्यभस्म त्रिफला चूर्ण के साथ सेवन करना महालाभदायक है।

रौप्यभस्म के शास्त्रोक्त गुण इस प्रकार हैं—शीतं, कषायं मधुरमम्लं वातप्रकोपजित्। दीपनं बलकृत्स्निग्धं गूढ़ाजीर्णविनाशनम्। आयुष्यं दीर्घरोगघ्नं रजतं लेखनं परम्॥

अर्थात्—रौप्यभस्म शीतल, कषैली, मधुर (पाक काल में) तथा कुछ अम्लता लिए हुये होती है यह अग्निदीपक, बलकर, स्निग्ध, आयुष्प्रद दोषों का उत्तम प्रकार से लेखन करने वाली अर्थात् विकृत रसादि धातु तथा वातादि दोषों को सुखाकर शरीर के बाहर निकाल देने वाली और वात प्रकोप जन्य रोग बहुत दिनों का अजीर्ण (गूढ़ाजीर्ण के स्थान में मूढ़ाजीर्ण और गुल्माजीर्ण भी पाठ है। मूढ़ से मूढ़ वात और गुल्म को भी लेखन गुण विशिष्ट होने से दूर कर सकती है) अन्यान्य दीर्घ रोगों (Chronic-Diseases) को भी दूर कर देती है।

रौप्य भस्म के अनुपान तथा मात्रा—मात्रा १ से ४ रत्ती तक रोगी का बल तथा रोग विचार कर देवे। वातजन्य रोगों पर गूगल या योगराज गूगल के साथ दे। वात पित्त जन्य विकारों पर द्राक्षा या द्राक्षारिष्ट के साथ, पित्तजन्य दाहादि विकारो पर कमल के शर्बत के साथ, श्वेत कुष्ट (रौप्य श्वेत कुष्ट या श्वित्र का दूर करने मे प्रसिद्ध है) में श्वेत कोयल या अपराजिता के मूल के स्वरस या काढ़े के साथ, बहुमूत्र पर जामुन के चूर्ण और शहद के साथ, मधुमेह मे जामुन के चूर्ण के साथ अथवा अर्जुन वृक्ष की छाल के काढ़े से, प्रमेह मे गुडिच का स्वरस या शिलाजीत के साथ, प्रदर पर धवई के काढ़े के साथ या रसांजन के साथ, शोथ पर बारहश्रृङ्ग भस्म और शहद के साथ क्षय रोग पर सितोपलादि चूर्ण के साथ, विषमज्वर मे गुड़िच सत तथा शहद के साथ, अतिसार पर धाय के फूल और बेल मूल की छाल के काढ़े के साथ, कास पर अडूसे के रस के साथ शहद मिलाकर सेवन करे।

(१) रक्तशुद्धि तथा ज्वर के नाशार्थ—चांदी भस्म १ र०, पीपल चूर्ण १ र० और इलायची चूर्ण ३ र० तीनों को एकत्र मिला कर फांक ले ऊपर से धनियां का अर्क जल में मिलाकर पिये या धनियां का शर्बत बनाकर पिये। इस प्रकार दिन में दो बार सेवन करें।

(२) शरीर पुष्टि के लिये—चांदी भस्म २ या ४ चावल भर, एक पान के बीड़े के साथ दिन में २ बार खाये।

(३) बल और वीर्य की वृद्धि के लिये—चांदी भस्म १ र० आंवला ५ तो०, मिश्री २ तो० एकत्र मिलाकर खाये।

(४) रसायनसार में लिखा है कि चांदी भस्म को शहद और अदरक रस के साथ सेवन करने से विशेषतः प्रमेह रोग शांत होता है और ताकत, पुष्टि, शुक्रवृद्धि भी होती है। यह भस्म ठंडी होने के कारण दाह को शांत करती है। जिन-जिन रसों में चांदी भस्म डाली जाती है वे सभी रस उत्तम बनते हैं।

* अशुद्ध रौप्य के दोष परिहारार्थ उपाय—यदि भूल से अशुद्ध चांदी की भस्म सेवन करने में आगई हो तो ३ दिन तक शहद के साथ शक्कर मिलाकर खाये (साथ ही में थोड़ा सा मक्खन मिला ले तो अच्छा हो) मात्रा—१ तो० मिश्री या शक्कर या २ तोला शहद के साथ दिन में दो बार, प्रातः-सायं सेवन करे। कहा है—

---

* यदि भूल से चांदी भस्म अशुद्ध रह जाय तो उसको ठीक-ठीक शुद्ध कर लेने का यह उपाय है कि उस भस्म में मिश्री और शहद की भावना देकर २ बार गजपुट में फूंक दे तो फिर वह कुछ विकार नहीं करता। ऐसा रसायनसारकार का अनुभूत कथन है।

—लेखक

"शर्करां मधुसंयुक्तां सेवते यो दिनत्रयम्।
अपक्व रौप्य दोषेण विमुक्तः सुखमश्नुते ॥"

॥ इति रौप्य प्रकरणम् ॥

ताम्र

औषधि कार्यार्थ उत्तम नैपाली ताम्र की योजना करनी चाहिये। अत्यन्त लाल रङ्ग का गुड़हर (जपा कुसुम) के फूल के समान, मुलायम, स्निग्ध, सुचिक्कन घन या हथौड़ी से ठोंकने पर शीघ्र ही पतले २ पत्र जिसके निकलते हैं ठोंकने से जो एकदम फटता नहीं प्रत्युत चिपट कर पत्रे के रूप में हो जाता है। जिसमें लोहा या शीशे का मिश्रण किंचित् भी नहीं रहता जिसके सेवन से वमनादि विकार नहीं होते तथा जो क्षार अम्लसे विकृत को प्राप्त नहीं होता उसे ही श्रेष्ठ त्रिदोष हरण में समर्थ नैपाली तांबा जानना चाहिये। दूसरा म्लेच्छ तांबा होता है जो श्वेत तथा श्यामवर्ण, रुक्ष खद-खद बजने वाला, हथौड़ीसे ठोंकने पर जिसके टुकड़े २ हो जाते हैं, जिसमें लौह और शीशा का मिश्रण होता है और वह वमनादि विकारों को करता है। भस्म या किसी भी औषधि कार्य के लिए म्लेच्छ ताम्र उपयोग में न लाये।×

× "जपा कुसुम संकाशं स्निग्धं मृदुघनक्षमम्।
लोहनागोज्झितं ताम्रं नेपालं मृत्यवे शुभम् ॥
कृष्णं रूक्षमतिस्तब्धं श्वेतं चापिघनासहम्।
लोहनागयुतं शुल्वं म्लेच्छं दुष्टं मृतोत्यजेत् ॥" आ० प्र०

अशुद्ध दशा में तांबा जहरीला होता है। इसमें आठ दोष मुख्यतः पाये जाते हैं। कहा है—"न विषं विषमित्याहुस्ताम्रतु विषमुच्यते। एको दोषो विषे ताम्रे त्वष्टौ दोषाः प्रकीर्तिताः॥ भ्रमो मूर्च्छा विदाहश्च स्वेदक्लेदनवान्तयः। अरुचिश्चित्तसंताप एतेदोषा विषोपमाः॥" आयुर्वेद में कहीं-कहीं जैपाल के विषय में लिखा है कि—"न विष विषमित्याहुर्जैपालो विषमुच्यते।" इत्यादि कहने का प्रयोजन इतना ही है कि ताम्र जैपालादि को कोई साधारण द्रव्य न समझें, प्रत्युत उन्हें जहरीले जानकर उनके विषय में खूब सावधानी रक्खें। अशोधित ताम्र के सेवन से चक्कर, मूर्च्छा, विदाह, प्रस्वेद (अत्यन्त पसीना निकलना) शरीर में चिकटापन वमन (कै होना) यह मुख्य लक्षण हैं। अरुचि और सन्ताप ये आठ दोष प्रकट होते हैं।* इनके सिवाय कुष्ठ, ज्वर, जड़ता, फोड़े फुन्सी आदि भी उपद्रव होते हैं। अतएव ताम्र की शुद्धि अन्य धातु की शुद्धि के समान तेल, तक्र, गोमूत्रादि में ७-७ बार बुझा कर अवश्य कर लेनी चाहिये। ताम्र शुद्धि के और भी प्रकार यहां लिखे देते हैं।

---

* उक्त आठ दोषों के सिवाय ग्लानि, शूल, खुजली, रेचन, वीर्य नाश भी होता है। कहा है—"वांतीभ्रांतीः सक्रमस्तापशूले कंडूत्वं वै रेचका वीर्यहन्त्री। अष्टौदोषाः कीर्तितास्ताम्रमध्ये तेषां सर्वं शोधनं कीर्तयिष्ये॥"

—रस० रा० सं०।

१-प्रकार—त्रिधारी थूहर और आक का दूध निकाल कर उसमें नमक घोट कर मिलावें, पश्चात् इसका गाढ़ा-गाढ़ा लेप तांबे के पत्रो पर कर, उन पत्रो को सुखाकर भट्टी मे लाल-लाल तपाकर निर्गुन्डी थूहर के रस में ३ बार बुझाने से वह शुद्ध हो जायगा। आ० प्र०।

२-प्रकार—गोमूत्र में नींबू रस और जवाखार (अथवा इमली के रस मे सुहागा) मिलाकर उसमें तांबे के पत्रों को दोलायन्त्र विधि से ४ घन्टे तक खूब तेज आग पर पकाने से भी वह शुद्ध होता है।

३-प्रकार—रसायनसार में लिखा है कि नेपाली ताम्र के बने हुये पुराने बर्तन मिलते है, शुद्ध और भस्म की क्रिया, उनके ही पतले-पतले पत्रो पर करनी चाहिये। अष्ट दोषो को दूर करने के लिये पत्रों को आग पर खूब तपाकर इन बारह चीजों में ७-७ बार बुझावे। तिल या सरसो का तेल, गो का या भैंस का मट्टा, गोमूत्र, कांजी, कुलथो के बीजो का क्वाथ, इमली की छाल अथवा पत्तों का क्वाथ, नींबू का रस, ग्वारपाठा का स्वरस, सूरण (जिमीकन्द) का स्वरस, गो का दूध (अभावे भैंस या बकरी का दूध), नारियल का पानी और शहद। यदि सूरण का स्वरस न मिले तो सूरण के कन्द में ही ताम्रपात्रो को रखकर तीन बार गजपुट देने से शुद्ध हो जाती है। यदि नारियल का पानी न मिले तो नारियल के तेल में भी तीन बार पत्रो को बुझाने

से काम चल सकता है। ध्यान रहे कि धातुओं की शुद्धि में कुछ कमी रह जाने से उतना नुकसान नहीं होता जितना की ताम्र शुद्धि में कुछ न्यूनता रह जाने से होता है।

४-प्रकार—विशेष शुद्धि और भस्म का एक प्रकार यह भी है कि ताम्र पत्रों को तेल, तक्र गोमूत्र और कुलथी के क्वाथ मे ७-७ बार बुझाने के पश्चात् उन्हें ४-५ दिन तक केवल तक्र में ही डुबो कर रक्खे, फिर रुतरन (नागार्जुनी दूधी) के पत्तों के रस मे डुबो कर रक्खे। पत्रों को रात भर रस में भिगो रक्खे तथा दिन में सुखा लेवे, इस प्रकार सात भावनायें देवे। पश्चात् गजपुट देकर पुनः नींबू के रस की ७ भावनायें देवे। पुनः गजपुट में रक्खे, फिर उक्त रुतरन के पत्तो के रस की भावना देवे, इस प्रकार यदि क्रम से १०० वार गजपुट दिया जाय तो उत्तम प्रकार की शुद्ध निरुत्थ भस्म ही तैयार हो जाती है, जिसका रंग आस्मानी, किरमिजी, माणिक के समान होता है।

२-प्रकार—पारद गंधक योगेन—शुद्ध पारद १ भाग तथा शुद्ध गंधक २ भाग को कज्जली को ग्वारपाठा के रस में खरल कर पारा, गंधक के समान वजन के ताम्र पत्रों पर, उस कज्जली कल्क का लेप कर के सराव संपुट में रख नमक और राख से संधि लेप कर के चूल्हे पर चढ़ा देवे। सरावले के ऊपर ठंडे जल से तर कपड़ा रखता जावे या गाय के गोवर को जल में मिला कर ऊपर से डालते जाय। चार प्रहर की आंच देनी चाहिये। स्वांग शीतल होने पर संपुट में से भस्म निकाल लेवे।

अथवा—उक्त पारद गंधक की कज्जली को अम्लपर्णी के रस मे घोटकर ताम्रपत्रो पर लेप कर दे। लेप करने से पहले ताम्र पत्रों को ५ प्रहर तक दोलायन्त्र विधिसे गोमूत्रमें पका सुखाले, फिर उन्हें हांडी में रख, सराव से ढक, संधि को गुड़ चूने से बांधकर के हांडी में ऊपर के खाली भाग मे रेत भर दे। फिर भट्टी पर चढ़ाकर एक पहर की अग्नि देने से ही भस्म तयार हो जायगी। स्वांग शीतल होने पर भीतर से मृत ताम्र को निकाल पीसकर रख लेवे।

अथवा—कज्जली से लिप्त उक्त ताम्रपत्रों को हांडीमें न रखते हुये सराव सम्पुट में अच्छी तरह बन्द कर तथा कपरोटी कर गज पुट में फूंक दे इस प्रकार तीन गजपुट देने से उत्तम ताम्रभस्म तयार होती है।

अथवा—ताम्रपत्रों को आधा भाग पारा, तथा ताम्र के समभाग गधक की कज्जली नीबू के रस में खरल कर उन पत्रों पर लेप कर सुखाये। पश्चात् हडिया लेकर तलैटी के मध्य भाग में छिद्र करे उसमें इमली की छाल की राख थोड़ी भरकर राख पर ताम्रपत्र १-२ रखे इन पत्रों पर आक के पके पत्ते १-२ रखे पत्तों पर पुनः ताम्रपत्र रखे उनपर पत्ते रखे इस प्रकार एक पर एक जमा कर मटकी का मुख बन्द कर दे। चूल्हे पर चढ़ा ४ पहर की प्रखर आग देने में उत्तम भस्म तयार होगी।

अथवा—उक्त प्रकारों से जो ताम्रभस्म प्राप्त होवे उसे नीबू के रस या अन्य किसी अम्ल रस में घोंटकर, गोला सा बनाये। उसे सुखाकर उसके ऊपर सूरण (जिमीकन्द) को पीस ३ या ४ अंगुल मोटा लेप कर दे अथवा जिमीकन्द को भीतर से कुछ खोखला कर उसके भीतर ताम्रभस्म के गोले को रख उसके मुख को जिमीकन्द के ही टुकड़े से बन्दकर दे तथा ऊपर से ३-४ बार कपड़मिट्टी करके उसपर १ अंगुल मोटा मिट्टी का लेप कर तथा सुखाकर गजपुट में फूंक दे। गोला स्वांग शीतल हो जाने पर भीतर से सावधानी पूर्वक ताम्रभस्म को निकाल पीसकर रख ले, यह भस्म वमन, भ्रांति विरेकादि दोषों से मुक्त हो जाती है। इसकी मात्रा रत्ती से ३ रत्ती तक पीपल के महीन चूर्ण और शहद के साथ सेवन कराने से श्वास, कास, क्षय, पांडु, अग्नि-मांद्य, अरुचि, गुल्म, प्लीहा यकृत, मूर्च्छा, शूल तथा धातुगत, ज्वरादि सर्व रोग नष्ट होते हैं।

५-प्रकार—सोमनाथी, ताम्रमारण प्रक्रिया—पारा, ताम्र पत्र और गंधक समभाग, शुद्ध हरिताल आधा भाग (यानी पारे से आधा), मनसिल चौथा हिस्सा (हरिताल से आधा) लेकर पारा, गंधक, हरिताल और मनसिल की एकत्र कज्जली करे। इसी कज्जली में से थोड़ी सी कज्जली को एक सरावले में फैला दे, उस पर ताम्रपत्र रक्खे। पत्रों को पुनः कज्जली फैला दे, उसपर पुनः

ताम्रपत्र रक्खे, इस प्रकार, कज्जली और पत्रो को जमाकर दूसरे सरावले से ढक कर संधि लेप करदे, पश्चात् गर्भयन्त्र* की कृति से वालुकायन्त्र में उसे ४ पहर तक क्रम से आंच दे, स्वांगशीतल हो जाने पर मृत ताम्र को निकाल महीन चूर्ण कर ले। योग्य अनुपान की योजना करके इसकी मात्रा २ से ४ रत्तीतक पटानेसे परिणाम शूल, उदर, पाण्डु, ज्वर, गुल्म, प्लीहा, यकृत, अर्श, विकृत, संग्रहणी आदि रोग दूर हो जाते हैं।

६-प्रकार—रसायन सार कथित ताम्रभस्म विधि भी बहुत उत्तम है। इस विधि से एक पथ दो काज होता है। ताम्रभस्म तथा रससिन्दूर दोनो एक साथ कर सकते हैं। शुद्ध किए हुए ताम्र पत्रो के छोटे २ टुकड़े कर उनके समान हिंगुलोत्थ पारद मिलाकर तावे के आधे नीबू के रस में घोटे जब तीन पहर घोट ले तब

---

* गर्भयन्त्रः—४ अंगुल लम्बी, ३ अंगुल घेरे वाली मिट्टी का मूषा बनावे। मुख गोलाकार हो, जब सूख जाय तब २० भाग अधजला लोह और १ भाग गूगल को एकत्र मिला खूब कूटकर ढक मूषा पर इसके ७-७ लेप कर देवे अन्त में एक भाग चिकनी मिट्टी और २ भाग सेंधा नमक के महीन चूर्ण को पानी में घोट लेप कर दे। इसके ढकने पर भी इसी प्रकार लेप करके दृढ़ बना लेना चाहिये। आवश्यकतानुसार छोटी या बड़ी भी मूषा बना ले, यही गर्भयंत्र है। —लेखक

सायङ्काल को बहुत होशियारी के साथ (जिससे पारद पानी के साथ खरल से बाहर न निकल जाय) जल से धो डाले। ऐसा धोना चाहिये कि जिसमें नीबू की खटाई बिलकुल निकल जाय। बाद में दूसरा नीबू का रस डालकर रात भर रख दे, प्रातःकाल फिर ३ पहर तक घोटे, इस प्रकार कम से कम ३ दिन घोटे। फिर ताम्र और पारद के तुल्य शुद्ध की हुई आमलासार गंधक डालकर कज्जली बनाये उस कज्जली को कपड़ मिट्टी की हुई आतशी शीशी में भरकर रसखिन्दूर की विधि से (रस सिंदूर की विधि प्रथम भाग में देखो) पकाये। यह स्मरण रहे कि जिस शीशी में ४ सेर कज्जली आ सके उसमें १ सेर कज्जली भरना चाहिये। अर्थात् पाव भर ताम्र, पाव भर पारद, आध सेर गंधक इन तीनों की बनी हुई कज्जली ४ सेर की शीशीमें भरकर ४ अहोरात्र की अग्नि दे, फिर स्वांग शीतल हो जाने पर शीशी के तल भाग में पाव भर ताम्रभस्म मिलेगी और शीशी के गले में कुछ कम पावभर रस सिन्दूर मिलेगा।

र० सा० से उद्धृत।

७-प्रकार—गोरख संहिता में ताम्र की श्वेत भस्म होने की विधि है। ताम्रपत्रों को भूर्ज पत्र के समान पतले करके तपाये और क्रम से तेल, तक्र और गोमूत्र में सात—सात बार बुझाकर गूलर के दूध में डुबाकर रख दे। नित्य गूलर का ताजा दूध डालता जाये और छाया में सुखाता जाये इस तरह ५३ दिन तक

करे। पश्चात् एकांत पवित्र स्थान मे औरस-चौरस दो हाथ गहरा एक गड्ढा खोद कर, उसमें, खैर और बर की लकड़ियां भर देवे। ताम्र पत्तों को शराव सपुट मे अच्छी तरह बन्द कर लकड़ियो के मध्य मे धर कर फूक देवे। स्वांग शीत होने पर, मोती क समान शुभ्रवर्ण की भस्म प्राप्त होती है।

अथवा—ताम्र के चूर्ण से दुगना भिलावा, और भिलावे के समभाग जैपाल (जमाल गोटा) लेकर, भिलावा और जैपाल को पीस कर कल्क बनावे शराव सपुट मे, इस कल्क के बीच मे ताम्र चूर्ण को रख, १० बार गजपुट देने से चूने के समान श्वेत भस्म होती है।

अथवा—वैद्य प० कालीदास जी मिश्र ने अनुभूत योगमाला में प्रकाशित किया है कि १ तो० ताम्र चूर्ण को नागफनी के फल रस मे ३॥ प्रहर तक खूब घोट कर, गोल टिकिया बना छाया मे सुखा लेवे। फिर श्वेत कनेर फूल १६ तोले और नागफनी के रस से लुगदी बना कर, वह टिकिया लुगदी मे रख, तीन कपड-मिट्टी कर के, १० सेर जंगली कंडो की आंच देवे। इस तरह ३-४ आंच देने से श्वेत ताम्र भस्म हो जाती है। कुव्वत बाह के लिये आजमाया हुआ है। मात्रा २ चावल भर मक्खन मिला कर खिलावे। घृत ज्यादा खावे, यदि खुश्की होवे तो दूध मे घी मिला कर खिलावे। ७ दिन मे नामर्द मर्द बन जाता है।

अथवा—श्वेत ताम्र भस्म की और भी एक विधि उक्त सज्जन की बतलाई हुई और आजमाई हुई है-शुद्ध तांबे का एक टुकड़ा लेकर आग मे तपा कर, तिल्ली के तेल में और दही में पृथक-पृथक २१ बार बुझावे, फिर करील की ताजी लकड़ी जो लम्बाई में १ बालिश्त ४ अंगुल हो और मुटाई जिसकी ८ इंच हो, लेकर उसमे आधी दूर तक लम्बा सूराख करे, फिर उक्त तांबे के टुकड़े को उसी सुराख मे रखकर, उसी लकड़ी के चूरे से सुराख बन्द कर देवे। यदि चूरा कम हो तो करील की ही लकड़ी की डाट लगा देवे। फिर उसको पुराने चीथड़ो से लपेट हवा से बचा कर, अग्नि लगा दे। स्वांग शीत होने पर निकाल ले, श्वेत भस्म हो जायगी। यह भस्म नपुन्सकता के लिये अक्सीर है। मात्रा १ चावल भर। मक्खन के साथ या केवल दें। पिलाये। इससे प्यास बहुत लगती है प्यास की तकलीफ ज्यादा हो तो दूध में घृत मिलाकर पिलये।

—अ० यो० से उद्धृत।

८-प्रकार—स्व० रसायन शास्त्री श्यामसुन्दराचार्य जी ने अपने रसायनसार नामक ग्रंथ में तुत्थ से निकाले हुये ताम्र की बहुत प्रशंसा की है तथा तुत्थ में त्रिफला का योग देकर ताम्र निस्सारण की विधि भी उत्तम बतलाई है। उनके कथनानुसार वास्तव में ही तुत्थ निस्सारित ताम्र नेपाली ताम्र की अपेक्षा कहीं अधिक श्रेष्ठ, निर्दोष और शुद्ध होता है। इसकी विशेष

शुद्धि के लिये, इसे ७ वार मदार के पत्तों के स्वरस में बुझाकर फिर इमली के पत्तों के काढ़े मे सेंधा नमक मिलाकर उसी में इस तुत्थोत्थित ताम्र को ४ पहर तक पकाये और फिर गौमूत्र में पका ले; बस यह अच्छा शुद्ध भस्म करने योग्य बन जाता है। पारद, गंधक के योग से इसकी भस्म प्रक्रियायें कइ तरह की रसायन सार में बतलाई गई हैं। पाठक उन्हे वहीं देख लें। यहां पर सब लिखने से इस ग्रंथ का अनावश्यक विस्तार होगा अतएव वह यहां नहीं लिखे जाते।

६-प्रकार—चक्रिका बन्ध नामक ताम्रभस्म प्रक्रिया-गंधक ५ तो०, मनसिल और हरताल (सब द्रव्य शुद्ध लेना चाहिये) समभाग २॥-२॥ तोला लेकर, ३ दिन घोटकर कज्जली बनाये। इस कज्जली को सींग के आकार की मूसा में भरकर, उसके मुख पर १० तोला शुद्ध ताम्र का ढक्कन (चक्रिका) लगाकर संधि को यत्नपूर्वक (गुड़ और चूने से) बन्द कर दे, और उस पर कपरौटी कर सुखा ले पश्चात् उसे अर्द्ध गजपुट मे फूंक दे। स्वांग शीत होने पर तांबे के ढक्कन को पीस तथा छानकर शीशी में भर दे, यदि एक बार में वह ढक्कन ठीक २ मृत न हुआ हो तो २-४ बार पुट देवे।

इसकी मात्रा १ से २ रत्ती तक शहद और अदरक के रस के साथ सेवन करने से शूल, गुल्म, अर्श, भगंदर, संग्रहणी,

अग्निमांद्य, विद्रधि, उदर रोग आदि नष्ट होते हैं। अर्श में इसे त्रिफला क्वाथ के साथ और भगंदर में मंजिष्ठादि क्वाथ के साथ देना ठीक होता है।

१० प्रकार--चक्रेश्वराख्य ताम्र भस्म प्रक्रिया-ताम्र, गंधक और पारद, (तीनों शुद्ध) सम भाग लेकर तीनों को एकत्र कर तीन दिन तक लाल चौलाई की जड़ का रस, नागरवेल, (पान) का रस, पाठे का रस, और पुनर्नवा, (साठी) के रस में तथा गोमूत्र में अच्छी तरह खरल कर, उनका गोला सा बनाकर, सम्पुट में बन्द कर ४ पहर तक चक्रयन्त्र* में पकावें। स्वांगशीत होने पर अन्दर से ताम्र भस्म को निकाल कर पीसकर रख लेवें शास्त्र में इसकी मात्रा १ मा० लिखी हुई है किन्तु वैद्य को अपनी

---

* चक्रयन्त्र—

"गर्त्तादग्धो भवेद्विह्निर्मध्यगर्ताद्रसं कुरु।
चक्रयन्त्रमिदं सिद्धं बाह्यगर्त्ताद् बृहत्पुटम्॥"

गजपुट के सदृश एक गड्ढा खोदकर, भीतर उसके एक हाथ गहरा, एक हाथ चौड़ा एक गड्ढा ऐसा खोदे कि जिसमें सपुट ठीक २ बैठ जाय। इस बीच के गड्ढे में थोड़ी दूर पर लोहे की जाली लगा देवे। जाली के नीचे के भाग में आग भर देवे तथा जाली पर सम्पुट रख, ऊपर से बालू डाल, बीच के गड्ढे को भर देवे, पश्चात् ऊपर के बड़े गड्ढे में जंगली कंडे भरकर आग लगा दीजिये। यही चक्रयन्त्र है।
　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　— लेखक।

तारतम्य बुद्धि से इसकी योजना करनी चाहिये। अनुपान—खैर-सार, पद्माख और मुलेठी का सम भाग मिश्रित महीन चूर्ण २ से ८ मा० तक गोमूत्र के साथ सेवन करने से श्लीपद (फील-पाव (Elephantiasis) रोग नष्ट होता है।

११-प्रकार—उदय भास्कर नामक ताम्र भस्म प्रक्रिया—पारद १ तो०, गंधक ४ तो०, (दोनों शुद्ध ले) दोनों को खूब घोटकर कज्जली बनाये तथा ४ प्रहर तक नीबू के रस में खरल करें। पश्चात् उसे महीन ताम्र पत्र २ तो० पर लेप कर, उन पत्रों को खरल में रख, उस पर नीबू का रस इतना डाले कि वे सब अच्छी तरह रस में डूब जाय। फिर उसे तेज धूप में सुखाकर तथा गोला सा बनाकर मूषा में बन्द करके कुक्कुट पुट में ३ पुट दें। पश्चात् स्वांग शीत होने पर अन्दर से ताम्रभस्म निकाले तथा महीन पीस कर शीशी भर रक्खे। इसका सेवन यथोचित मात्रा तथा अनुपान के साथ करने से सब प्रकार के शूल तथा अन्यान्य रोगों पर भी हितकारी है।

१२-प्रकार—किलास नामक ताम्र भस्म प्रक्रिया—शुद्ध पारद १ भाग तथा शुद्ध गंधक २ भाग की कज्जली करें। इस कज्जली को नीबू के रस में खूब घोटकर ३ भाग ताम्र पत्रों पर लेप करके सराव संपुट में रख गजपुट दें। पुनः खैर, बावची और नीम के रस में घोट कर, जब तक ठीक-ठीक ताम्र भस्म तैयार न हो, पुट देते जाओ। जब उत्तम भस्म हो जाय तब

महीन पीसकर शीशी में भर रक्खे। इसे यथोचित मात्रा में, बावची के क्वाथ के साथ पीने से तथा आहार में केवल शुद्ध छांछ पीते रहने से लाल और श्वेत कुष्ठ का नाश हो जाता है।

१३-प्रकार—वनस्पति के योग से ताम्र भस्म—(१) ग्वारपाठा के रस में शुद्ध ताम्र पत्रों को १०० बार बुझाकर तथा ग्वारपाठा की ही लुगदी में उसे रख, संपुट कर ५ बार गजपुट देने। से ताम्र भस्म तैयार होती है। यह ताकतवर है, मात्रा १ रत्ती। (२) मेषशृंगी (मेढ़ाशिंगी) के रस में ताम्र पत्रों को २१ बार बुझाकर फिर उसी के लुगदी में रख संपुट कर २-३ बार गजपुट में फूंकने से भी ताम्र भस्म उत्तम होती है। गुण और मात्रा उक्त प्रकार से ही है। (३) राई (राजिका) के पत्तों के रस में ताम्र पत्तों को १०० बार बुझा तथा उसी की लुगदी में संपुट कर २-३ बार गजपुट में फूंक देने से प्रायः सर्व रोगों पर लाभदायक भस्म तैयार होती है। (४) तामा चूर्ण को नींबू के रस में ८ प्रहर, आम के कोपल के रस में ४ प्रहर तथा ग्वारपाठा के रस में ४ प्रहर घोटकर तथा सुखाकर संपुट में रख २-४ बार गजपुट देने से भी शक्तिवर्द्धक भस्म तैयार होती है। (५) खट्टे अनार के रस में १०० बार बुझाकर उसी की लुगदी में संपुट कर ५ बार गजपुट देने से बल को बढ़ाने वाली भस्म तैयार होती है। मात्रा आधी रत्ती मक्खन के साथ। (६) ताम्र चूर्ण को इन्द्रायण के फल में भरकर, उस

फल पर कपड़मिट्टी कर छाया मे सुखा लेवे। फिर उसे २० सेर उपलों को अग्नि देवे। इस प्रकार क्रम से २० इन्द्रायण के फलों में रखते जावे तथा कपरौटी कर छाया मे सुखा उपलों की आग मे रखते जावे। अन्त में उत्तम भस्म मिलेगी। इसकी गोलियां इस प्रकार बना लेवे जायफल १ तो०, लौंग १ तो० के महीन चूर्ण में इन्द्रायण फल के द्वारा तैयार की हुई ताम्र भस्म १ तो० तथा इसी में अफीम ३ मा० मिलाकर सबको उत्तम मधुकासव या उत्तम मदिरा (शराब) ४ तो० के साथ खरल कर २ से ४ रत्ती तक की गोलियां बना लेवे। सन्निपात मे रोगी को इलायची के १ तो० क्वाथ के साथ, रोगी का बलाबल देखकर, आधे-२ घंटे से, १-१ गोली दें। शीघ्र ही सन्निपात दूर होकर रोगी चैतन्य हो जाता है। नपुंसकता पर एक गोली रोज गोदुग्ध के साथ सेवन करे। वात पर गर्म किये हुये घृत के साथ दिन में ३ बार १-१ गोली देवे। संग्रहणी मे मलाई के साथ इसका सेवन लाभदायक है। यह। योग 'वैद्य' से लिया गया है तथा हमारा अनुभूत है।

ताम्र भस्म की पहिचान—ताम्र भस्म में यह देख लेना चाहिये कि उसमे वांति आदि करने के विकार तो कायम नहीं है। यह जानने के लिये किसी अम्ल रस या खट्टे दही मे उक्त भस्म मे से थोड़ी-सी भस्म डालकर कम-से-कम २४ घंटा तक पड़ा रहने देवे। यदि दही का रङ्ग न बिगड़े, वह हरा न

हो जाय तो समझना चाहिये कि भस्म उत्तम निर्विकारी है। अन्यथा उसे पुनः निर्विकारी करने के लिये इस प्रकार प्रयत्न करे, घृतकुमारी (ग्वारपाठा) के रस में उसे घोटकर टिकिया बनाकर सुखाये फिर कलछी में रख भट्ठी में तपाकर कम से कम २१ वार तथा ज्यादा से ज्यादा १२० वार गोमूत्र में वुझानेसे वह निर्विकारी उत्तम भस्म हो जाती है।

यदि उस भस्म में ताम्र की झलक हो या वह निरुत्थ न हो तो उसे औषधि कार्य में न लाये। उसे इस प्रकार निरुत्थ करने के पश्चात् उपयोग में ला सकते हैं—मन्दार वा थूहर के दूध में घोटकर उस ताम्रभस्म की टिकिया बना धूप में खूब सुखाकर सम्पुट में रखकर गजपुट देवे। जब स्वांग शीतल हो जाय तब निकाल कर उसे मित्रपंचक (मधु, घृत, गुञ्जा, सुहागा, गूगल) में घोटकर सम्पुट कर गजपुट देकर देखे कि उसमें झलक तो नहीं दीखती। यदि झलक दीखे तो पुनः मन्दार वा थूहर के दूध में घोटकर उक्त प्रकार से गजपुट देवे तथा परीक्षार्थ पुनः मित्र-पञ्चक की योजना देकर देख लेवे। कम से कम ५-७ वार ऐसा करने पर वह पूर्ण निरुत्थ हो जावेगी। यदि मदार वा थूहर का दूध न मिले तो शुद्ध गंधक और ग्वारपाठा के रस के साथ उसे घोटकर पूर्ववत निरुत्थीकरण कर लेवे, ऐसा रसायन सारकार का अनुभूत सिद्धान्त है।

गुणधर्म—यकृत पित्ताशयादि पर इसका मुख्य असर-यदि शरीरान्तर्गत, यकृत, प्लीहा, पित्ताशयादि स्रोतसंयुक्त या स्रोत

रहित पिंडो की वृद्धि हो गई हो तो ताम्र का उपयोग उनपर बहुत लाभकारी होता है। ताम्र उनकी वृद्धि को घटाकर उन्हें सशक्त बनाता है तथा जो शरीर के परमाणु विकृत होकर मृतप्राय हो गये हों उन्हे सजीव चेतन्य परमाणुओं से अलग करता है। यकृत के पित्तोत्पादक पिंड (Gall bradder) पर इसका विशेष उपयोग होता है। पित्ताशय संकुचित हो जाने से पेट में दर्द होता हो अथवा पित्त के अधिक घनीभूत हो जाने से पित्ताशय की अन्तस्त्वचा पर व्रण हो गये हो तो ताम्र का प्रयोग बहुत लाभकारी होता है। इसके प्रयोग से पित्त का उत्तम प्रकार से स्राव होकर उसकी विषमता दूर हो जाती है।

यदि पित्ताशय में पित्त अत्यन्त ही घनीभूत होकर पत्थर सा हो गया हो तथा उसी के कारण पेट में पीड़ा हो तो अभ्रक भस्म का सेवन करले। आकके पत्तोंके रस के साथ सेवन कराने से पित्त की पथरी धीरे-धीरे पिघल कर उसका स्राव हो जाता है। अपर यकृत सम्बन्धी अनेक प्रकार के विकारो पर ताम्र का अच्छा देखा गया है।

गुल्म और अष्ठीला+ (Prostate) के विकारो में ताम्र

+ अष्ठीला यह ग्रंथि वस्तिमुख और मूत्र प्रसेक नलिका के बीच में होता है। मूत्रप्रसेक का प्रथम भाग इसी ग्रन्थि में से होकर गया हुआ है। अतएव इस ग्रंथि में विकार हो जाने से मूत्रकृच्छ्र आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं। शुक्राशय प्रसेक नलिका से मिली हुई है अतएव

भस्म अच्छा काम करती है। गुल्म विकारों में ताम्रभस्म के साथ कुमारी आसव के समान सौम्यरेचक औषधि देना आवश्यक है।

उदर सम्बन्धी विकारों पर—उदर सम्बन्धी विकार प्रायः तीन कारणों से उत्पन्न होते हैं। (१) यकृत-विकृत, (२) मूत्र पिंडों में विकृति और (३) हृदय की विकृति चाहे जिस विकृति के कारण उदर रोग हुआ हो, ताम्रभस्म का प्रयोग कभी फेल नहीं होता। किंतु ध्यान रहे ताम्र मूत्रल नहीं है अर्थात् इससे मूत्रोत्सर्जन में सहायता नहीं पहुँचती, अतएव जलोदरादि में संचित विकारी जल को बाहर निकालने में ताम्र के साथ कोई भी मूत्रल औषधि देना परमावश्यक है किंतु क्षार युक्त औषधि इसके साथ कदापि न दें। कारण, इससे यकृत क्षुब्ध होकर विकार अधिक बढ़ जाना सम्भव है। अतएव शामक, मूत्रल गोखुरू क्वाथादि दें, तथा साथ ही साथ विरेचन देकर संचित जल को बाहर निकाल डालने का प्रयत्न करना चाहिये।

अष्ठीला के विकार से शुक्राशय तथा शुक्रोत्पादक वृषण में भी विकृति हो जाती है। विकृतअष्ठीला के कई प्रकार हैं। जैसे आशुकारी अष्ठीला दाह (Acute Prostutis) चिरकारी अष्ठीला (Chronic Prostutis) अष्ठिलास्थि अश्मरी (Prostatic Calculi) वाताष्ठीला (Prostatic enlargement) इत्यादि।

आमाशय की ग्रंथि या मांसार्बुद परभी ताम्रभस्म का उत्तम असर होता है तथा वह वातजन्य उदर शूल को शमन कर देती है।

पित्त प्रकृति के रोगी को उदर सम्बन्धी कोई विकार हो तो ताम्र का सेवन कराने से दस्त अधिक लगते हैं। कारण, जैसा कि ऊपर कह आये हैं। ताम्रपित्त के तीक्ष्णादि गुणों को बढ़ाकर पित्तोत्सर्जन अधिक करता है इसी से अधिक दस्तों की शिकायत होती है अतएव पित्त प्रकृति के रोगी को ताम्रभस्म के साथ गुल कन्द या अमलतास का गूदा देने से विकृत पित्त सब सरलता पूर्वक निकल कर दस्त खुलासे से होने लगेगा।

ऊपर हमने लिखा है कि मूत्र पिंडों की विकृति से उदर रोग हो जाये उसपर भी ताम्रभस्म का उपयोग ठीक होता है; किंतु इस विकार में कई बार देखा गया है कि ताम्र का सेवन कराने से मूत्रोत्पादन क्रिया कम होकर मूत्रपिंडों का शोथ अधिक बढ़ जाता है। तथा उदर में विकृत जल का सञ्चय अधिक होने लगता है। अतएव मूत्रपिंड विकार जन्य उदर रोगों में ताम्रभस्म का सेवन बहुत ही विचारपूर्वक करना चाहिये। यदि मूत्रपिंडों में किसी प्रकार से व्रण होकर राध या पीव जमा हो गई हो तो ताम्र उसके दूषित राध को निकाल कर पिंडों के शोथ को घटा देगी।

अम्लपित्त के विकार में-यदि केवल जी मिचलाता हो, कै कम होती हो, कड़वा जलन युक्त पित्त गिरता हो, चक्कर आंखों के सामने अंधेरी छा जाती हो तथा पेट में असह्य वेदना हो तो ताम्रभस्म लाभकारी है। किन्तु कै अधिक प्रमाण में, सरलता पूर्वक होती हो तथा वह अम्लता युक्त कुछ मीठी और कड़वी सी हो तो सुवर्ण माक्षिक देना उत्तम है। सारांश, ताम्र भस्म का उपयोग उस अम्लपित्त मे करना चाहिये जिसमें पित्तोत्सर्जन ठीक ठीक नहीं होता हो तथा जिसमें पित्त अधिक तीक्ष्ण, उष्ण और प्रभाव शाली हो। यकृत में पित्त की उत्पत्ति आवश्यकता से बहुत कम होने से कभी २ अतिसार शुरू हो जाता है। ऐसी अवस्था में भी ताम्र का कार्य ठीक होता है।

पांडु रोग में—पांडु रोग में यकृत या प्लीहा इनमें से कोई भी बढ़ा हो, वर्ण पांडु न होकर फीका हो, तेलिया चमड़ी हो, सर्वांग पर थोड़ी २ सूजन हो, अर्थात् हीन पित्त, कफ वृद्धि के लक्षण हों तो ताम्र का उपयोग करें।

प्रमेह में—मांस भक्षी लोगों को प्रमेह हुआ हो तो अन्य औषधियों की अपेक्षा ताम्र उत्तम काम देता है। ताम्र से मांस पचने के लायक पित्त पैदा हो कर प्रमेह दूर करने में मदद मिलती है।

—अ० यो० माला के धात्वांक से

विशूचिका (हैजा) में—हैजा में अत्यधिक दस्त हो जाने के बाद हाथ-पांवों मे गोले से उठने लगते हैं, ऐसी अवस्था में ताम्रभस्म का सेवन अल्प प्रमाण में किन्तु बार-बार कराने से देखा गया है कि वमन, दस्त, शूल और भ्रम बहुत कुछ दूर हो कर रोगी चैतन्य लाभ पाता है। पश्चात् रोगी को सुवर्ण माक्षिक शंखभस्मादि देव, रोगी शीघ्र ही चंगा हो जाता है।

प्लेग से—प्लेग के आरम्भ होते ही और किसी प्रकार की कोई औषधि न देकर केवल ताम्रभस्म का ही उचित अनुपान और उपयुक्त मात्रा मे प्रयोग करने से प्लेग का समस्त विष नष्ट हो जाता है। रोगी शीघ्र ही ज्वर से मुक्त हो, पूर्ण आरोग्य लाभ करता है। प्लेग की आदि, मध्य, अन्त प्रायः इन सभी अवस्थाओं में ताम्रभस्म दी जा सकती है। हमने १०० से लेकर १०५ डिग्री तक ज्वर में ताम्रभस्म देकर अच्छा फल पाया है। जब रोगी रोग से अत्यन्त पीड़ित होता है, अत्यन्त बेहोशी ज्वर की, तीव्रता, तृषा की प्रबलता, हृदय मे दुर्बलता, और सम्पूर्ण शरीर में शिथिलता आदि लक्षण प्रगट हो इस समय ताम्रभस्म की अल्प मात्रा प्रदान करने से विशेष लाभ होता देखा गया है। इससे उक्त उपद्रव सब धीरे-धीरे कम होने लगते हैं। प्लेग ज्वर के उत्पन्न होते ही पूर्ण वयस्क मनुष्य को एक-एक रत्ती की मात्रा से ताम्रभस्म शहद या किसी अन्य अनुपान के साथ, दिन में ३ बार देनी चाहिये। अल्प अवस्था में अल्प मात्रा दे। ज्वर की तीव्रता में इसकी मात्रा कुछ

कम देनी चाहिये। इस पर औटाकर शीतल किये हुये जल के सिवाय और कुछ भी खाने या पीने की चीज नहीं देनी चाहिये। अत्यन्त क्षुधा होने पर थोड़ा २ गाय का गरम दूध दें हमने रोग के कई रोगियों को केवल ताम्रभस्म सेवन कराकर ही आरोग्य किया है। ताम्र में तीव्र विष नाशक शक्ति है। इस लिये विशेष कर प्लेगादि रोगों के जन्तुओं (विषों) को यह बड़ी शीघ्रता से नष्ट करता है।×

ध्यान रहे ताम्र यह अत्यन्त तीक्ष्ण, तीव्र और स्फोटक है। रक्त के दाब को बढ़ाकर हृदय की क्रिया शक्ति को उत्तेजित करता है। अतएव इसके व्यवहार में विशेष कुशलता की आवश्यकता है। जहां तक हो सके गर्भिणी, सूतिका, शिशु, वृद्ध, शक्तिक्षीण, क्षयी, अर्शरोगी विशेषतः रक्तार्श रोगी, मुखव्रणी आदि रोगियों को ताम्रभस्म का उपयोग न कराये।

सारांश यह है कि ताम्रभस्म कषैला, कुछ मधुर, तिक्त और अम्लता युक्त, पाक में कटु और सारक है। पित्त और कफ को दूर करने वाला, किंचित् शीत (?) रोपण तथा लेखन गुणयुक्त है। पांडु, अर्श, ज्वर, कुष्ट, कास, क्षय, उरःक्षत समस्त विषविकार; शोथ, शूल को नष्ट करता है। कुछ बृंहण अर्थात् पुष्टिकारक भी है। जैसा कि कहा है—

× यह अनुभवयुक्त कथन वैद्य घनानन्द पंत जी का 'वैद्य' से यहां उद्धृत किया गया है।

—लेखक

ताम्रं कषाय मधुरं सतिक्रमम्लञ्च पाके कटु सारकञ्च ।
पित्तापहं श्लेष्महरं च शीतं तद्रोपण स्याल्लघु लेखनं वा ॥
पांडुरगोज्वरः कुष्ठं कासश्च क्षत सक्षयान् ।
पीत समस्तं पित्त शोथकफ शूलमपाकरोति ॥
प्राहुः पर बृंहणमल्पमेतत् ॥×

मात्रा अनुपान इत्यादि–ताम्रभस्म की सर्व साधारण मात्रा १ से २ रत्ती तक दी जाती है। विशेष २ रोगों पर इसकी मात्रा तथा अनुपान की योजना इस प्रकार करनी चाहिये।

(१) उदर सम्बन्धी रोगों पर–(अ) ताम्रभस्म २ से ३ रत्ती निसोत ४ से ६ रत्ती, स्नुही (सेंहुड़, थूहर) १–३ रत्ती,

---

× योग रत्नाकर में कहा है—

ताम्रं शीतं निहन्याद् व्रण, कृमि जठरानाह सप्लीहपांडु ।
श्वासश्लेष्मास्रवातक्षय पवनगदं शूलयुग्मं च गुल्मम् ॥
कुष्टान्यष्टादशापिस्मर बलरुचिकृद्रक्तमेदोम्लपित्त ।
च्छेदि प्रोक्तत्वशुद्धं कृमिमुदरगदाध्मान कुष्टादि कुर्यात् ॥

अर्थात् शुद्ध ताम्र शीतगुण युक्त है तथा व्रण, कृमि, उदर, पेट फूलना, प्लीहा, पांडु, श्वास, कफ, वातरक्त, क्षय, वातविकार, शूल, परिणाम शूल, गुल्म अठारह प्रकार के कुष्ट, रक्तपित्त और अम्लपित्त का नाशक, शक्तिवर्द्धक, रुचिकारक और कामोद्दीपक है। अशुद्ध ताम्र कृमि, उदर तथा आध्मान (पेट फूलना) विकारों को उत्पन्न करता है।

हरड़ ६ या ९ रत्ती और जमालगोटा ४-६ रत्ती, सबका महीन चूर्ण कर गरम जल के साथ सेवन करने से ८ प्रकार के उदर रोग, अफारा, गुल्मशूल, विशेषतः जलोदर नष्ट होता है। इस प्रयोग को शास्त्र में उदरध्वांत सूर्य कहा है।

(आ) ताम्रभस्म को पारा गन्धक की कज्जली, सोंठ, मिर्च पीपल, सुहागे की खील, सज्जीखार, जवाखार, पीपलामूल, चव, चीता, पांचो नमक, अजवायन, और हींग, समान भाग लेकर एकत्र चूर्ण मे मिलाकर तथा तेज धूप में नीबू के रस की ७ भावनायें देकर एक-एक मासे की गोलिया बनाकर यदि देवदारु के क्वाथ के साथ सेवन करे तो जलोदर, अग्निमांद्य, व्रणजन्य रोग यकृत, कृमि, प्लीहा, आमरोगादि का नाश होता है। इस योग का नाम 'उदरामयकुंभकेसरी रस' है।

(इ) जलोदर पर—ताम्रभस्म, पीपल, हल्दी का चूर्ण ये तीनों सम भाग लेकर, उसमें शुद्ध जैपाल सबके बराबर ले। सबको एक दिन सेंहुँड़ थूहर के दूध मे घोटकर चूर्ण बना ले, इस चूर्ण को २ या ४ रत्ती की मात्रानुसार शीतल जल के साथ खाने से विरेचन के द्वारा जलोदर नष्ट हो जाता है। यदि दस्तो को बन्द करना हो तो दही-भात खिलादे। अन्यथा आम के निकल जाने पर मूंग का यूष और भात खिलाय। इस योग को 'जलोदरारि रस' कहते हैं।

(ई) ताम्र भस्म १ से ३ रत्ती तक पान मे रखकर अथवा अद्रक रस के साथ खिलाने से भी सब उदर रोग दूर होते हैं।

(३) शूल पर—ताम्र भस्म ५ तो०, इमली का क्षार ४० तो०, तथा भूनी हींग, हर्र, सोंठ, मिर्च, पीपल, करंजबीज और चोरक (गठिवन) का चूर्ण पाच-पांच तो० लेकर, सब का एकत्र महीन चूर्ण कर लेवे। इस चूर्ण को १ से ६ मा० तक मन्दोष्ण जल के साथ सेवन करने से उपद्रव युक्त शूल तत्काल शान्त होता है। अथवा—ताम्र भस्म मे घी में भूनी हुई हींग, सोंठ, मिर्च, पीपल, मुलैठी, सोचल (काला नमक), इमली का क्षार सब सम भाग मिलाकर एकत्र खरल कर रक्खे। इसको १ से ४ मा० तक उष्ण जल के साथ सेवन करने से तीव्र पीड़ा युक्त उदर शूल शीघ्र ही नष्ट होता है। इस प्रयोग को "ताम्राष्टकम्" कहते हैं। अथवा—ताम्र भस्म ३ भाग, शुद्ध पारा १ भाग और शुद्ध गन्धक ६ भाग लेकर सबकी कज्जली कर, नीबू के रस में घोटकर गोला-सा बना सुखा ले। पश्चात संपुट मे बन्द कर लघु पुट मे फूंक देवे। स्वांगशीत होने पर अन्दर से रस को निकाल, पीसकर शीशी मे भर रक्खे। इसकी एक रत्ती मात्रा अद्रक का रस और सेंधा नमक के चूर्ण के साथ या रेंडी के तेल के साथ या सेंधा नमक, भुनी हींग और जीरे के चूर्ण के साथ सेवन करने से सर्व प्रकार के शूल नष्ट होते हैं। इसे त्रिनेत्र रस, कहते हैं। यदि इसे हरिण के सींग की भस्म, स्वर्ण भस्म और सुहागे की खील (सब सम भाग) एकत्र मिलाकर और शहद के साथ सेवन किया जाय तो पक्तिशूल

(Hyperchlorhydria) नष्ट होता है। अथवा—ताम्र भस्म १ या २ रत्ती, हरड़ और सेंधा नमक (समभाग) चूर्ण १ मा० में मिलाकर सेवन करने से भी उदर शूल नष्ट होता है।

(ऊ) शूल पर 'क्षारताम्ररस' भी रामबाण है। विधि बहुत सरल है। ताम्र भस्म ४ तो०, शुद्ध गंधक ४ तो० और इमली का क्षार ७ तो० लेकर सब को एकत्र खरल कर महीन चूर्ण कर रक्खे। बस क्षारताम्र रस तैयार है। इसको उक्त मात्रानुसार गरम जल के साथ सेवन कराने से सब प्रकार का शूल शमन होता है।

(ए) गुल्म पर—ताम्र भस्म, शुद्ध पारा, गंधक, जैपाल, हरड़, बहेरा, आमला, सोंठ, मिर्च, पीपल इन १० द्रव्यों का सम भाग लेकर खरल कर। ध्यान रहे पहले पारद गंधक की कज्जली करके उसमें ताम्र भस्म को खूब घोट लेवे, पश्चात् अन्य द्रव्यों का महीन चूर्ण उसमें मिलाकर घोटे। इसे नाराच रस कहते हैं। २ या ३ रत्ती चूर्ण शहद के साथ चटाने से गुल्म तथा उदर रोग नष्ट करने में यह प्रख्यात है।

(२) कुष्ठ, भगंदरादि रक्तविकारों पर—

(अ) ताम्र भस्म को समान भाग अपामार्ग (चिरचिटा क्षार, जवाखार और सज्जीखार (सोडा) के साथ खरल कर, रोज प्रातःकाल, दुपहर और शाम को भोजन से पहले २ रत्ती

की मात्रानुसार सेवन करने से ४९ दिन में साध्य अथवा असाध्य औदुम्बर महाकुष्ट भी नष्ट होता है। ध्यान रहे इस पर केवल दुग्धाहार करे। मांस, मछली, विदाही पदार्थ तथा जड़ जल से परहेज करे।

(आ) पारद गंधक के योग से बनी हुई पुरानी ताम्रभस्म २ र०, बावची चूर्ण २ या ३ मा० एकत्रकर शहद ३ तो०, मिलाकर सेवन करे। यहां यह एक मात्रा कही है। इसी प्रकार नित्य दो बार अथवा एक ही बार पथ्य पालन पूर्वक सेवन करे तो कोठ, ददर्द, शीत, पित्त तथा अठारह प्रकार के कुष्ट शीघ्र ही अवश्य नष्ट होते हैं।

(इ) ताम्रभस्म, शुद्ध पारद और गंधक तीनो समभाग लेकर खरल कर फिर इस कज्जली को लोहे के पात्र मे जरा सा घी डाल मन्दाग्नि पर पिघलाये। पश्चात् उसे खैर के क्वाथ, मजिष्ठादि के क्वाथ और भांगरे के रस की तीन-तीन या सात-सात भावना देकर ३-३ रत्ती की गोलियां बना ले। इसके सेवन से कुष्ट, उदर रोग, कफज तथा वातज रोग भी दूर होते हैं। इस प्रयोग का नाम 'ताम्रेन्द्र रस' है।

(ई) ताम्रभस्म १५ तो०, पारद ५ तो० गंधक १० तो०, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेरा और आमला ५-५ तो० लेकर प्रथम पारद गंधक की कज्जली बना ले, फिर अन्य द्रव्यों का महीन

चूर्ण उसमें मिला एक-एक दिन सम्भालू, अदरक और भांगरे के क्वाथ में घोट सुखा ले। पश्चात मूसा में बन्द कर एक दिन लघुपाग्नि से स्वेदित करे फिर उसे बावची के तेल में घोट, रखे। यह 'चन्द्रकान्त' नामक रस तैयार हुआ। इसकी मात्रा ४-५ रत्ती। चीता, सेंधा नमक, और गंधक चूर्ण के साथ अथवा बावची के फल युक्त करञ्ज बीज के तेल के साथ सेवन करने से कुष्ठ असाध्य नष्ट हो जाता है।

(ड) ताम्रभस्म १० भाग, कालीमिर्च ५ भाग और मीठा तेलिया २ भाग सबका महीन चूर्ण करे। इसे १ रत्ती की मात्रा से मजीठ के काढ़े के साथ सेवन कराने से गलित स्फुटित कुष्ठ मंडल कुष्ट, विचर्चिका, दाद, पामा तथा सब तरह के कुष्ठ नष्ट होते है। इस प्रयोग का नाम 'उदयभास्कर रस' है।

(ऊ) ताम्रभस्म (पारद गंधक के योग से बनी हुई) एक या दो रत्ती के प्रमाण में बावची के क्वाथ के साथ पीने से तथा आहार में केवल छाछ पीने से लाल और सफेद कुष्ट दूर हो जाता है।

ताम्रभस्म २० तो०, रससिन्दूर, गंधक, लोहभस्म, गूगल, हरड़, बहेड़ा, आमला, कुचला (शुद्ध), चीता और शिलाजीत प्रत्येक का महीन चूर्ण ५-५ तो० तथा करञ्जुवे की गिरी का चूर्ण २० तो०, लेकर सबको शहद और घी में मिलाकर चिकने बर्तन

में भरकर रख दे। इसका १ र० से १ मा० तक की मात्रा में सेवन करने से सब प्रकार के कुष्ठों का नाश होता है। पथ्य में घी शहद मिश्री खाये अथवा गुड़ युक्त भात खाये। यदि इसके सेवन करने से शरीर में ऊष्मा (ताप) अत्यधिक बढ़ जाय तो नागबला की जड़ का चूर्ण घी व शहद में मिलाकर चटाये। इस प्रयोग का नाम 'कुष्ठकुठार रस' है।

(ए) ताम्रभस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शिलाजात, अमलवेत पारा, गंधक १-१ भाग तथा गुड़ सबका ८ वां भाग लेकर सबको एकत्र खूब खरल करें। इसकी मात्रा १ से २ र० तक घी और शहद में मिला सेवन करने से शतारुंषि कुष्ट का नाश होता है।

३-(अ) ज्वरों पर—ताम्रभस्म ५ भाग, शुद्ध बच्छनाग (मीठा तेलिया) १ भाग, सोंठ २ भाग, पीपल ३ भाग, काली-मिर्च ४ भाग और शुद्ध हिंगुल ६ भाग, लेकर सब को अद्रक के रस में खरल कर ४-४ र० की गोलियां बना ले, इसे शहद के साथ सेवन करने से सब प्रकार के ज्वर नष्ट हो जाते हैं। इसको 'त्रिपुर भैरव रस' कहा है। —भा० प्रकाश।

(आ) ताम्रभस्म, पारद, गंधक (दोनों शुद्ध), पीपल शुद्ध जमाल गोटा, कुटकी, हरें, निसोथ और शुद्ध कुचला समान भाग लेकर प्रथम पारद गंधक की कज्जली बनाकर उसी में अन्य औष-धियों का महीन चूर्ण मिला ४ पहर तक सेहुड़, थूहर के दूध में

घोटकर २-२ रत्ती की गोलियां बना ले। १-१ गोली शहद के साथ दिन मे दो बार देने से नवीन ज्वर नष्ट हो जाता है। ध्यान रहे यह 'त्रैलोक्य डम्बर रस' विरेचक है अतएव गर्भिणी स्त्री को न दे। योग रत्नाकर मे इसे धतूरे के पत्तो मे घोटकर गोलियां बनाने को लिखा है किंतु यह बहुत ही तीव्र हो जाती है। इसके ऊपर मूंग के यूष के साथ हलका भोजन करना चाहिये।

नोट—उक्त प्रयोग मे उसारे रेवन्द (पीतककुठ) प्रत्येक द्रव्य के सम भाग में मिलाकर सबको एक दिन सेंहुड़ के दूध मे, एक दिन धतूरे के रस मे खरल कर उक्त प्रमाण की गोलियां बना ली जांय तो यह "ज्वरध्वांत दिवाकर" नामक महातीव्र रस तयार होता है। जिसमें से केवल १ गोली सवेरे आद्रक रस के साथ रोगी को देने से विरेचन होकर, ज्वर नष्ट हो जाता है। जब विरेचन पूर्णतया हो जाय तब मूंग की दाल और भात पथ्य मे देना चाहिये।

(इ) शुद्ध मनसिल हरिताल और गंधक के योग से बनी हुई तुत्थोत्थ ताम्रभस्म ज्वर के लिए अंकुश है इसे रसायनसार मे ज्वरांकुश नाम दिया है। इसको मिश्री की चाशनी के साथ देने से शीतज्वर शीघ्र शांत होता है।

(ई) ताम्रभस्म, पारा, गंधक और मीठा तेलिया सम भाग लेकर कज्जली करे। इस कज्जली को एक दिन हार सिंगार रस मे और एक दिन अदरक के रस मे भावना देकर धूप में सुखाय

लेव। इसमें से १ रत्ती चूर्ण, मिश्री ६ मासे में मिला, अदरक के रस के साथ सेवन करे तो ज्वर नष्ट होता है। इस प्रयोग का नाम "ज्वरभस्त्रिहरस" है। यदि इसके सेवन से दाहादि पित्त विकार से हो तो शीतापचार करना चाहिये।

(उ) ताम्रभस्म, कालीमिर्च, लोंग, केशर, पीपल और भारंगी का चूर्ण समभाग लेकर एकत्र महीन चूर्ण करे। १ मा० चूर्ण पान में रखकर खाने से कफ ज्वर दूर होता है।

(ऊ) पित्त ज्वर में ताम्रभस्म १-२ रत्ती, द्राक्षासव या दाख के रस के साथ या अनार के रस के साथ देवे।

(ए) सन्निपात ज्वर पर—ताम्रभस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक एक-एक भाग लेकर, तीनों की कज्जली कर, कज्जली के समभाग गोदुग्ध में, धूप में घोटे फिर एक दिन संभालु के रस में घोटकर गोला बनाये। उसे सुखाकर अन्धमूषाम बन्दकर ३ पहर तक बालुकायंत्र में पकावे। स्वांग शीत होने पर, उसमें से औषधि निकाल उसमें आठवां भाग बच्छनाग (मीठा तेलिया) का चूर्ण मिला खूब एकत्र खरल करे। २ रत्ती की मात्रानुसार पञ्चकोल (पीपल, पीपरामूल, चव्य चीता और सोंठ) के क्वाथ के साथ सेवन कराने से तथा बकरी के दूध के साथ पथ्य देने से अवश्य सन्निपात दूर हो जाता है। इस प्रयोग को "त्रिगुणाख्यरस" कहते हैं।

(ए) ताम्रभस्म, शुद्धपारा, मीठातेलिया, शुद्ध गंधक, सुहागे की खील, जवाखार, सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध, जैपाल

हरड़, बहेड़ा, और आमला सब समान भाग लेकर, प्रथम पारा-गंधक की कज्जली बना लेवे। पश्चात् अन्य द्रव्यों का महीन चूर्ण उसमें मिला १०० बार + शहद में खरल कर एक-एक रत्ती की गोलियां बना लेवे। एक से ३ गोली तक सोंठ के चूर्ण के साथ खाकर ऊपर से नारियल का पानी पीने से सन्निपात, जीर्णज्वर, विषमज्वरादि नष्ट होते हैं। इसे "चिंतामणिरस" कहते हैं। यदि इसके सेवन से दस्त अधिक आये तो मांड़ निकाल कर साफ किया हुआ भात और छाछ खाना चाहिये। यदि दस्तों की शिकायत न हो तो छाछ में सेंधा नमक और जीरा मिलाकर उसके साथ भात खाये।

(ओ) ताम्रभस्म (पारा, गंधक, मनसिल, हरिताल के योग से बनी हुई) में चौथाई भाग शुद्ध मीठा तेलिया और कालीमिर्च का चूर्ण मिलाकर देवदाली के रस में घोटकर ३-३ रत्ती की गोलियां बना ले। इसको अद्रक के रस के साथ सेवन करने से सब प्रकार के सन्निपात शीतज्वर नष्ट हो जाते हैं।

रोगी मूर्छित हो गया हो तो उसकी मूर्छा दूर हो जाती है इसे "चैतन्य भैरव रस" कहते हैं। यदि इसके सेवन से दाह हो तो शीतोपचार करे।

× शहद इतना लेवे जिसमें वह सब चूर्ण में ठीक प्रकार से मिलकर गोलियाँ ठीक २ बन सकें। शहद को एकदम न मिलाते हुये थोड़ा-थोड़ा डालते जाय और घोटते जांय इस प्रकार १०० बार डाले और घोटे।

(ओ) वात कफजन्य ज्वर पर—ताम्रभस्म; पारद, गंधक सुहागा समभाग लेकर ताम्रभस्म का दुगना शुद्ध जमालगोटा तथा सैंधा नमक, कालीमिर्च, इमली के छिलके की राख, मिश्री ये सब समान भाग लेकर प्रथम पारद गंधक की कज्जली कर उसमें अन्य द्रव्यों का महीन चूर्ण मिला पश्चात् इस एकत्रित चूर्ण को नीबू के रस के साथ खूब खरल कर १-२ रत्ती की गोलियां बना ले। १-१ गोली दिन में ३ बार उष्ण जल से दे। इस योगको 'शीतारि रस' या 'सूर्यशेखर' रस कहते हैं।

(क) नवज्वर या सन्निपात पर—ताम्रभस्म, शुद्ध गंधक पारद, शुद्ध श्वेत गुञ्जा, कालीमिच, बड़ी हरड़, मछली का पित्त और शुद्ध जैपाल (जमाल गोटा) सम भाग विधि युक्त एकत्र खरल कर १ या २ र० की मात्रा अद्रक रस के साथ दे। यह "सन्निपात भैरव रस" है।

(ख) ताम्रभस्म, कपूर; खर्पर, (यशद) और हींग सम भाग लेकर कसौंदी के पत्तों के रस में दो पहर तक घोटकर बत्ती के समान लम्बी-लम्बी गोलियां बना ले। त्रिदोषजन्य ज्वर पर इस गोली को आंखों में आंजने से ज्वर व दाह शांत होता है।

(ग) ताम्रभस्म, वत्सनाभ (मीठा तेलिया) तथा शुद्ध पारद, गंधक, सम भाग लेकर एकत्र खरल करे। प्रथम इसमें निर्गुण्डी, थूहर के रस की ७ भावनायें पश्चात् अद्रक के रस की ७ भावनायें देवे। इसकी १-१ रत्ती की गोलियां बना ले। एक

एक गोली दिन में दो या तीन बार अद्रक के रस के साथ देने से त्रिदोष जन्य ज्वर शांत हो जाता है। इसके सेवन में विशेष पथ्य की आवश्यकता नहीं। यह "राजचंडेश्वर" कहलाता कहलाता है।

(घ) ताम्रभस्म ४ भाग, जमालगोटा ३ भाग, सुहागा २ भाग और मीठा तेलिया १ भाग, इन सबको कूट-पीस कर महीन चूर्ण कर शीशी में भर रक्खे। १ से २ रत्ती तक चूर्ण अद्रक और सोंठ, मिर्च, पीपल, चित्रक, सेंधा नमक के चूर्ण के साथ मिलाकर सेवन करने से त्रिदोषज ज्वर, शीतपूर्व, विषमज्वर, दाहपूर्व विषम ज्वर, आमवातादि रोग दूर होते हैं। यह योग 'मृतसञ्जीवनी रस' कहलाता है।

(४) अपस्मार, उन्माद, कम्पादिक पर—

(अ) ताम्रपत्र, पारदभस्म, (अभाव में रससिन्दूर) लोह भस्म, हरिताल, गंधक, मनसिल और रसौत सम भाग लेकर, गोमूत्र में खरल कर गोला सा बना उसके ऊपर-नीचे दुगुना गंधक बिछाकर लोहे के पात्र में थोड़ी देर तक अर्थात् गंधक जल जाने तक पकाये। पश्चात गोले को निकाल, महीन पीस कर शीशी में भर रखे। इसको १ से ५ रत्ती तक खाकर ऊपर से हींग काला नमक और कूठ का सम भाग मिश्रित चूर्ण १ तो० गोमूत्र में मिला उसी में थोड़ा घी डालकर पी जाये। (इस प्रकार इस चंडभैरव रस नामक रस का सेवन अपस्मार (मिरगी) रोग से शीघ्र ही मुक्त कर देता है।

(आ) ताम्रभस्म (गंधक और मनसिल के योग से बनी हुई शोधित नेपाली तांबे की होनी चाहिये) १ तो०, स्वर्ण सिंदूर ६ मा०, शुद्ध मनसिल १ तो०, काले धतूरे के बीज १। तो०, (काले धतूरे के अभावमें किसी भी धतूरे के बीज ले) शुद्ध मीठा तेलिया १। तो० और वच १। तो० इन सबके चूर्ण को बच के क्वाथ में भावना देकर, २ रत्ती प्रमाण गोलियां बना ले। इसका नाम उन्माद हर रस है। इसके अनुपान के लिए २ तो० वच और ३ तो० घी (जूना १२ वष का न मिले तो तीन वर्ष का ले) इन दोनों को क्वाथ करके इसमें १ तो० अमरबेल (आकाश बेल) की भस्म (अमरबेल को हांडामें भर सराब सम्पुट कर प्रथम मन्द २ आंच देते हुये तेज आंचदे। २ प्रहर तक आंच देने से भस्म हो जाएगी) मिलाकर इसी मे घी (जूना ४० वर्ष का न मिले तो १० वर्ष का लेवे) ६ मासे डालकर नस्य देने से उन्माद और मिर्गी नष्ट होती है। उक्त क्वाथ के साथ उन्माद हर रस की मात्रा सेवन कराने से उन्माद और मिर्गी दोनों रोग अवश्य नष्ट होते हैं। यह प्रयोग रसायनसार का है।

(इ) ताम्रभस्म (शुद्ध तांबे के कटक बेधी १-१ या २-२ अंगुल लम्बे पत्र लेकर चौगुनी गंधक मिलाकर तांबे के सम्पुट में बन्द कर भूधरयन्त्र में १ पुट देकर, उसका महीन चूर्ण कर ले)

के समानभाग कालीमिर्च, हरड़, बहेड़ा और मीठा तेलिया सबको एकत्र खूब घोटकर महीन कर ले। नित्य सवेरे १ या २ रत्ती चूर्ण सेवन कराने से कम्र-सन्धियों की सूजन सर्व वातजन्य रोग आदि रोग दूर होते हैं। यह 'उदय-भास्कर' नामक रस है।

(देखो—रस चिन्तामणि)

(ई) ताम्रभस्म और रससिंदूर सम भाग लेकर, कुटकी के रस की २१ भावनाएं देकर, मूंग या उरद जैसी गोलियां बना ले। इनके सेवन से सर्वाङ्गवात, कम्पवात नष्ट होता है। यह 'कम्पवातारि' रस कहलाता है।

(उ) ताम्रभस्म ५ तो०, शुद्ध पारद २५ तो० और गंधक २५ तो० लेकर कज्जली करें फिर इस कज्जली को जम्भीरी नीबू और पान रस के साथ घोटकर कटकवेधी ताम्रपत्रों पर लेप कर सराब सम्पुट कर गजपुट में फूंक दे पश्चात् ५ पहर तक भूधर यन्त्र में पका चूर्ण कर, समभाग सोंठ, मिर्च, पीपल का चूर्ण मिला शीशी में रखे। इसकी १ या २ मात्रा सेवन कराने से अर्द्धाङ्गवात और कंपवात दूर होता है। यह 'कम्पवात हर रस' कहलाता है।

(ऊ) ताम्रभस्म (पिष्टी रस इस प्रकार बना ले—शुद्ध पारद ५ भाग तथा शुद्ध गंधक १० भाग की कज्जली कर खाने के पान (नागर बेल) के रस में खरल कर पांच भाग शुद्ध की

कंटकवेधी ताम्र पत्रों पर उसके कल्क का लेप करे, तथा सराव संपुट में रख, गजपुट में फूंक देने से जो भस्म तैयार होगी उसे पिष्टा रस कहते हैं) का १ या २ रत्ती के प्रमाण में, सोंठ, मिर्च, पीपल चूर्ण के साथ सेवन कराने से अर्द्धाङ्ग वात, कंप वात, दाह, संतापादि दूर होते हैं।

(ए) ताम्र भस्म २० तोला, पारद २० तोला, अभ्रक भस्म, (अभ्रक भस्म की क्रिया आगे सविस्तार लिखी है) ४ तो० लेवे। ताम्रभस्म को खाने के पान के रस में खूब खरल कर ले, वैसे ही गंधक को जंभीरी नीबू के रस में खरल कर लेवे पश्चात् सबको एकत्र विधि युक्त खरल कर सराव संपुट मे रख भूधर पुट की ५ प्रहर आंच देवे। स्वांगशीत होने पर अन्दर से रस को निकाल उसमे सोंठ, मिर्च, पीपल का चूर्ण मिला रख देवे। १ या २ रत्ती की मात्रा में इसका सेवन करने से सर्वांङ्गवात, एकांगवात या कंपवात नष्ट होते हैं।

(५) कफ, क्षय, श्वास, हिक्का आदि पर—

(अ) ताम्रभस्म, पारदभस्म, हींग (भूनी हुई), पोहकरमूल, सेंधानमक, शुद्ध गंधक, हरितालभस्म और कुटकी ये सब समभाग लेकर एकत्र खूब खरल करे। पश्चात् पुनर्नवा देवदारु, निर्गुण्डी, थूहर, चौराई तथा कटु परवल के रसों के साथ, क्रम से एक-एक दिन इसे खरल करे। बस, यह 'मंथानभैरव-रस' तैयार हो गया। इसकी १ से ४ रत्ती तक मात्रा शहद के साथ

सेवन कराने से कफ या कफजन्य रोग दूर होते हैं। इसके ऊपर नीम की छाल का क्वाथ पीने से उत्तम लाभ होता है।❀

(आ) ताम्रभस्म तथा शुद्ध पारद गंधक तीनों समभाग लेकर पान के रस में एक दिन खरल कर मन्दाग्नि से २ घड़ी तक इसे पकाये। तदनन्तर महीन चूर्ण कर रख लें। शहद, गुड़ के साथ इसे 'श्लेष्मकुठार रस' की १ या २ र० मात्रा सेवन करने से कफ दोष शांत हो जाता है।

(इ) कफजन्य हृदयरोग पर--ताम्रभस्म दो भाग, शुद्ध पारद १ भाग, शुद्ध गंधक १ भाग इन सबका एक दिन त्रिफला के क्वाथ में खूब खरल करे फिर १ दिन मकोय के रस में खरल कर मूंग या उरद जैसी गोलिया बनाये। इस 'हृदयार्णव रस' की १ गोली खाकर ऊपर से मकोय के फल आधा तो० तथा त्रिफला १ तो० एकत्र मिला ३२ तो० जल में अष्टमांश क्वाथ बना करके पी लेवे।

❀ उक्त मंथानरस में पारदभस्म न लेकर, शुद्ध पारद और गंधक की कज्जली बना अन्य द्रव्यों का महीन चूर्ण उसी में बांट कर थोकाई, देवदाली, कदवी तोरी तथा नीले फूल वाली संभालु के रस की भावना देकर गोलियां बनाने से उत्तम 'कफकेतुरस' तयार हो जाता है। इसका सेवन उक्त विधि से ही करे तो प्रबल कफ नष्ट होता है।

—लेखक।

(ई) खांसी-श्वास पर—ताम्रभस्म १-२ रत्ती पीपल चूर्ण और शहद के साथ चटाने से खासी-श्वास पर लाभ होता है। अथवा केवल मुलेठी चूर्ण और शहद के साथ या अतीस चूर्ण और शहद के साथ ताम्रभस्म चटाने से भी खांसी दूर होती है।

(उ) पित्तज खांसी पर—ताम्रभस्म १-२ रत्ती गदुग्ध और मिश्री के साथ सेवन करे। अथवा—ताम्रभस्म, अभ्रक, भस्म और तीक्ष्ण लौह भस्म समान भाग लेकर एकत्र कर कसौंदी, दालचीनी, साल और अम्लबेत के रस में घोट दो-दो रत्ती की गोलियां बनाये। यह 'त्रिनेत्ररस' तैयार हो गया, इसको खाने से या मुख में रखकर चूसने से ही पित्तजन्य दुधर खांसी दूर होती है।

(ऊ) श्वास-खासी पर—ताम्रभस्म १६ भाग तथा शुद्ध पारद १६ भाग और गन्धक ८ भाग इन तीनों को महीन कज्जली कर इनमें सेंधा नमक ८ भाग और पीपल ६ भाग का महीन चूर्ण मिला नीबू के रस की भावना देकर एक छोटा सा पुट दे देवे। यह 'श्वासान्तक रस, तैयार होगया। १ या २ रत्ती की मात्रा शहद के साथ चाटते रहने से श्वास-खांसी तथा गुल्म, शूल, उदर, पाडु नष्ट होते हैं।

(ए) हिक्का पर—ताम्रभस्म तथा शुद्ध पारद और गंधक तीनों एकत्र (सममाग) घोटकर दो या तीन रत्ती अदरक के रस के साथ सेवन कराने से हिक्का रोग नष्ट होता है। कहा है—

"पक्वाम्रे रसः पिष्टो विशनां हिक्किनां वरः॥"

(ऐ) क्षय पर—तामाभस्म, पारदभस्म, अभ्रकभस्म, लोह भस्म, शिलाजीत, मीठा तेलिया तथा त्रिफला और गुडिच के क्वाथ से शुद्ध किया हुआ गूगल इन सबको समान भाग लेकर एकत्र खरल करे। बस "पञ्चामृतरस,, तैयार होगया। १ या २ रत्ती की मात्रा से दूध और वन तुलसी (बावरी) के चूर्ण के साथ अथवा काली मिर्चो का चूर्ण और घृत के साथ अथवा चूर्ण और शहद के साथ सेवन कराये। पारद या पारदभस्म के प्रकरण में जो पथ्य लिख आये हैं उसका पूर्ण तया पालन करे।

(६) दाह, भ्रम, मूर्छा आदि पर—

(अ) तामाभस्म अथवा दाहान्तकरस इस प्रकार बना लें तामाभस्म १ भाग और शुद्ध पारद ५ भाग दोनों को खरल में डाल कर खूब मर्दन करे। दूसरे खरल में शुद्ध गंधक को जमीरी नींबू के रस में और फिर नागवल्ली या खाने के पान के रस में खूब खरल कर इस गधक कल्क को प्रथम खरल में डाल एकत्र मिला कर खूब खरल करे। जब कुछ गोला-सा बन जाय तब सराव सपुट में रख भूधर पुट दे दो। यदि एकबार में भस्म न हो तो २-३ बा. में अवश्य हो जायगी। इस दाहान्त रस को पीसकर शीशी में भर रक्खे। इसको मात्रा १ या २ रत्ती, अद्रक के रस के साथ सेवन कराये दाह, संताप पित्तजन्य, मूर्छा आदि रोग दूर होते हैं।

(आ) ताम्रभस्म (मात्रा उपरोक्त) घी में मिलाकर चाटे और ऊपर से धमासे का क्वाथ पीने से भ्रम या मूर्च्छा का अति शीघ्र नाश होता है। कहा है:—

ताम्रं दुरालभाक्वाथैः पीतन्तु घृत संयुतम्।
निवारयेद्भ्रमं शीघ्रं मूर्च्छांचापिसुदुस्तराम्॥

(इ) ताम्रभस्म, खस तथा केशर समानभाग लेकर खरल में महीन चूर्ण कर ले। इसे २ से ४ रत्ती की मात्रानुसार शीतल जल के साथ पिलाने से मूर्च्छा अति शीघ्र दूर होती है। कहा है-

ताम्रभस्मं समोशीरं केसरं शीतवारिणा।
पीतं मूर्च्छां द्रुतं हन्याद् वृत्रमिन्द्राशनिर्यथा॥

(७) अर्श पर—ताम्रभस्म ७ तो०, लोहभस्म ७ तो० तथा शुद्ध पारद ४ तो० और शुद्ध गंधक ७ तो० लेकर प्रथम पारद गंधक की कज्जली कर उसमें ताम्र और लौह घोट दे पश्चात् दन्ती-मूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, सूरनकन्द (जिमीकंद), वंशलोचन सुहागा, जवाखार और सेंधा नमक, प्रत्येक २० तो०, लेकर एकत्र सूक्ष्म चूर्ण कर उक्त ताम्र, लौह मिश्रित कज्जली में मिला ले। फिर तिधारी थूहर का दूध ३२ तो०, और गोमूत्र १२७ तो० लेकर किसी कलईदार कढ़ाई में डाल उसी में उक्त द्रव्यों का मिश्रण भी डालकर चूल्हे पर चढ़ा दें। गोली बनने के समान जब गाढ़ा कल्क हो जाय तब उतार कर २ से ८ रत्ती तक की गोलियां बना

कर रख ले। नित्य १-१ गोली सेवन से अर्श (बवासीर) नष्ट होती है। इसका नाम अर्श कुठार रस है।

(आ) ताम्रभस्म तथा शुद्ध पारद और गन्धक सब सम भाग लेकर सबकी कज्जली करे। पश्चात् इस कज्जली को कलई-दार कड़ाह में रख उसमें यथेच्छ चौराई के जड़ का रस और सेंधा नमक का पानी मिलाकर मन्दाग्नि पर पकाये। जब गोला बनाने योग्य हो जाय तो उसका एक गोला सा बनाकर कपड़े में लपेट ऊपर आमले की पिट्ठी का लेप कर दे तथा मन्दाग्नि पर फिर २ पकावे। जब गोला अच्छी तरह पक जाय तब उसे स्वांग शीतल होने पर तोड़कर भीतर से औषधि को निकाल पीस डाले। ध्यान रहे ऊपर जो चौलाई का रस आदि हमने यथेच्छ लेने को लिखा है। तथापि उन्हें इस प्रमाण से ले लेने से ठीक कार्य होता है। यदि कज्जली २० तो० हो तो चौलाई का रस ४० तो० ले और १० तो० सेंधव में ३० तो० पानी मिला ले। उक्त पीसे हुये रस को शीशी में भर रखे। उक्त मात्रानुसार इसका सेवन मिश्री, घी और शहद में मिलाकर करे। ऊपर से तक या नारियल का जल पिये। [illegible] से अर्श, प्लीहा, पाण्डु आदि रोग दूर होते हैं।

(इ) [illegible] और रोगों पर—

[illegible] शुद्ध गन्धक [illegible] शुद्ध [illegible] (या

ताल भस्म) ८ भाग, सोंठ, मिर्च पीपल एक-एक भाग और मीठा तेलिया २ भाग का महीन चूर्ण मिला कर, शिलाजीत ३ भाग मिलाये और खूब खरल करे। पश्चात् सभालू (निर्गुन्डी) अद्रक, भांगरा और जयन्ती के रस में सात-सात दिन खरल कर, धूप मे सुखा ले। यह वृ० नि० रत्नाकर में कहा हुआ 'उदयभास्कर' नामक रस तैयार हो गया। इसकी एक-एक रत्ती मात्रा अद्रक के रस और त्रिकुटे के चूर्ण के साथ सेवन करने से पाण्डु, कामला, सूजन आदि कई रोग दूर होते है।

(आ) ताम्रभस्म, स्वर्णभस्म, चांदी भस्म और रससिंदूर समान भाग लेकर सबको एकत्र कर एक दिन जंभीरी नीबू के रस में घोटकर धूप में सुखाये। पश्चात् उसके नीचे-ऊपर समभाग शुद्ध गंधक का चूर्ण रखकर सराव संपुट कर बालुकायंत्र में २ प्रहर तक मन्दाग्नि से पकाये। स्वांगशीत हो जाने पर औषधि को निकाल पीस रक्खे, १ या २ रत्ती की मात्रानुसार, हर्र का चूर्ण और शहद के साथ सेवन करने से पाण्डुरोग चन्द दिनो में ही नष्ट हो जाता है। इस प्रयाग को 'त्रिमल्लहारस' कहते है।

(इ) ताम्रभस्म, पारदभस्म (अथवा रससिंदूर), गंधक और मीठा तेलिया समभाग लेकर चित्रकमूल के क्वाथ मे सब को एकत्र खूब खरल करे। पश्चात् लगभग १ घंटा मन्दाग्नि से स्वेदित करे। इसको भी उक्त मात्रा से सेवन कराने से शोथयुक्त पांडुरोग नष्ट होता है। यह 'पांडुपंचशोषणरस' कहलाता है। इसे 'आनिलरस, भी कहते है।

(ई) ताम्रभस्म, शुद्ध पारद, गंधक, शुद्ध जमालगोटा और गूगल समभाग लेकर। प्रथम पारद गंधक की कज्जली कर उसमें ताम्रभस्म खरल करे। फिर पश्चात् जमालगोटा का महीन चूर्ण मिला गूगल के साथ सब एकत्र घोट डालें फिर घृत के साथ सबको खूब खरल कर दो-दो रत्ती की गोलियाँ बनावें नित्य १-२ गोली सेवन करने से भी शोथयुक्त पाण्डु नष्ट हो जाता है। यह 'पाण्डुसूदन रस' कहलाता है। इस पर शीतल जल और अम्लपदार्थ का निषेध है।

(उ) शोथ पर ताम्रभस्म, लोहभस्म, सुहागा, शुद्ध पारद और शुद्ध गंधक समभाग लेकर प्रथम पारा गंधक की कज्जली बना उसमें अन्य चीजें मिलावें। सबको एक दिन अद्रक रस में घोटकर गोला बना और सुखाकर सम्पुट में बन्द कर, लघु पुट में फूंक देवे स्वांग शीत होने पर औषध निकाल पीस रक्खे। इसे एरंडमूल और अपामार्ग के ५ तो० क्वाथ के साथ, १ से ३ रत्ती तक सेवन करने से असाध्य शोथ नष्ट हो जाता है। इसे 'त्रिनेत्राख्य रस' कहते हैं। अथवा—इसी रस का दूसरा प्रकार ताम्रभस्म स्वर्णभस्म, सुहागा, शङ्ख और पारदभस्म (अथवा रससिंदूर) समान भाग लेकर सबको एक दिन अद्रक के रस में घोट गोला बनाय, सुखाकर सम्पुट बन्द कर गज पुट में फूंक दे। उक्त मात्रानुसार पुनर्नवा के रस के साथ सेवन करे। असाध्य शोथ, शूल; गुल्म और अर्श नष्ट होता है।

(९) अग्निमांद्य पर—ताम्रभस्म १० तो०, शुद्ध पारद १५ तो०, शुद्ध गंधक २५ तो०, मीठा तेलिया २५ तोला ले। पारद गंधक की कज्जली कर ताम्रभस्म और मीठा तेलिया का मर्दान चूर्ण उसमें मिला जम्भीरी रस की ८ भावनायें दे, भांगरे के रस की ३, अद्रक रस की ३ और गिलोय के रसकी ३ भावनायें देकर १ या २ रत्ती की गोलियां बना ले। इसके सेवन से अग्निमांद्य दूर होता है। यह एक प्रकार का 'अग्निकुमार रस' है।

(१०) शर्करा (अश्मरी) पथरी पर—ताम्रभस्म को सम भाग बकरी के दूध में मन्दाग्नि से पकावे। जब दूध सूख जाय तब ताम्रभस्म के समभाग शुद्ध पारा और शुद्ध गधक लकर तीनो की कज्जली करे। फिर उसे सम्भालु के पत्तो के रस मे घोट गोला बना सुखाकर सम्पुट मे रख बालुका यन्त्र मे १ पहर तीव्राग्नि से पकाये, पश्चात् औषधि को निकाल पीसकर रख ले। मात्रा १ से २ रत्ती, अनुपान में बिजौरे नीबू की जड़ को जल मे पीस ले। इसका नाम है 'त्रिविक्रम रस' यह पथरी को नष्ट कर देता है।

(११) विष पर—ताम्रभस्म और स्वर्णभस्म सम भाग लेकर एकत्र खरल कर शीशी में भर रखे। इसकी मात्रा २ रत्ती से २ मा० तक मिश्री और शहद मे मिलाकर चटाने से सब प्रकार के स्थावर विष (कन्दमूल खनिजादि पदार्थों के विष) नष्ट हो जाते हैं।

(१२) छर्दि (कै, वमन) तृष्णा पर—ताम्रभस्म २ भाग

और बंगभस्म १ भाग एकत्र कर मुलहठी के रस की भावना देकर सुखा ले। इसकी मात्रा २ से ४ रत्ती है। अनुपान-चन्दन उसबा (सारिवा) मोथा, छोटी इलायची और नागकेशर समान भाग तथा सबके बराबर धान की खीलें लेकर १६ गुने पानी में पकाये जब आधा जल शेष रहे तब उतार कर ठन्डा होने पर मिश्री और शहद मिला पीये। इस प्रयोग को कुमुदेश्वर रस कहते हैं। यदि रोगी को अत्यधिक कै होते हों या प्यास का जोर बहुत हो तो इस रस का सेवन बहुत ही लाभदायक है।

(१३) मेदोरोग पर—ताम्रभस्म, हरिताल शुद्ध तथा शुद्ध पारद और गंधक समभाग लेकर आक के दूध के साथ एक दिन खरल कर शीशी में भर दे। मात्रा-१ से ३ र० शहद के साथ इस 'वडवाग्नि रस' का सेवन करने से मेद या स्थूलत्व शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

(१४) बलवीर्य वृद्धि—ताम्रभस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक इन तीनों को सम भाग लेकर, एकत्र कज्जली बनाकर, एक दिन संभालू के रस में धूप में खरल करे पश्चात् मूषा में बन्द करके बालुकायंत्र में रख ३ पहर तक तीव्राग्नि में पकाये। इसे १ रत्ती की मात्रानुसार पान के रस के साथ सेवन करने से बल वीर्य की वृद्धि होकर शरीर पुष्ट होता है।

(१५) वीर्यस्तम्भक वटिका—ताम्रभस्म, जायफल, अकरकरा, लौंग, सोंठ, शीतलचीनी, केशर, पीपल, पीलाचन्दन ये सब

समभाग लेकर महीन चूर्ण कर लेवे। फिर चूर्ण के समभाग अफीम तथा अफीम से आधा भीमसेनी कपूर उसी चूर्ण में मिला शहद के साथ खूब खरल कर आधे मासे की गोलियां बना लेवे रात्रि में सोने के पहिले १ गोली खाकर ऊपर से पकाया हुआ भैंस या गाय का दूध पीवे इससे अपूर्व वीर्यस्तम्भन होता है।

नोट—शास्त्रों मे औषधियों की जो मात्रायें लिखी हुई हैं आधुनिक काल में उतनी मात्रा रोगी सहन नहीं कर सकता, अतएव इस ग्रन्थ में हमने स्वानुभव से तथा अन्य वैद्यों के मत से, मात्रायें निश्चित करके लिख दी हैं। वैद्यगण रोगी, रोग-देश कालानुसार, विचार करके मात्रा में, तथा औषधि के द्रव्यों में फेर-फार कर सकते है।

अब यहां कुछ ताम्र रसायन कल्प लिखे देते हैं जो विशेष चमत्कारी तथा नाना प्रकार के रोगों पर परम हितकारी सिद्ध हुये हैं।

(१) शुद्ध ताम्रभस्म ५ तोला, शुद्ध पारद १० तो० और शुद्ध गंधक ५ तो० तीनों को एकत्र घोटकर कज्जली बना लेवे। फिर इस कज्जली को लोहे की कढ़ाई में रख हाथी शुण्डी का रस और कुछ घी अंदाज से, उसी कढ़ाई में डालकरचूल्हे पर चढ़ा देवे। मन्दाग्नि से पकावे। जब गंधक जल जाय, जलीय अंश न रहे तब कढ़ाई की औषधि को उसी कढ़ाई में खूब घोट कर शीशी में भर रक्खे। इसकी मात्रा १ से ३ रत्ती तक है।

अनुपान में शहद २ तो० घी ६ मासा एकत्र कर इसी में औषधि की मात्रा मिलाकर चटाने से अग्निमांद्य, अजीर्ण, ग्रहणी, पांडु, कामला, परिणाम शूलादि रोग अत्यन्त शीघ्र नष्ट होजाते हैं। यह योग बंगसेन में कहा हुआ है, हमने स्वानुभव से उचित फेर—फार करके इसे यहां लिख दिया है।

(२) शुद्ध पारद और शुद्ध गंधक २॥ तोला प्रत्येक लेकर कज्जली करे इसमे २॥ तोला बहेड़ा महीन चूर्ण कर खरल करे। फिर सबके बराबार ताम्रभस्म लेकर उसी में खरल करे। पश्चात् जंभीरी नीबू रस, हुल-हुल के रस तथा पीपल और मोचरस के क्वाथ की तेज धूप में उक्त ताम्रभस्म बहेड़ाचूर्ण मिश्रित कज्जली को भावना देवे (अर्थात एक चीज के रस को कज्जली में डाल और घोटकर तेज धूप में रख देवे उसके सूखने पर अन्य औषधि का रस मिला और घोटकर धूप में रख देवे। इसी प्रकार उक्त सब रसों की भावना देवे) तदन्तर उक्त प्रकार से भावित चूर्ण को पत्थर के खरल में ऊपर भी जहां-जहां नीबू के रस की भावना देने को लिखा है, तहां-तहां पत्थर का खरल ही काम में लाना चाहिये) डालकर जंभीरी नीबू के रस के साथ घोटकर गोलियां २-२ रत्ती की बना लेवे। शीशी में भर रक्खे उक्त ताम्र कल्प को एक गोली से आरम्भ कर प्रति दिन एक-एक गोली बढ़ाते हुये सेवन करे, ऊपर से उत्तम पान का बीड़ा लगा कर खावे, ३-४ घटे के पश्चात् औषधि पचने पर

नित्य घृतयुक्त दूध, भात खाये। इस प्रकार १-१ गोली बढ़ाते हुये १० दिन के बाद फिर १-१ गोली घटाते हुये सेवन करे। जब १ गोली पर आजाय तब फिर १-१ गोली उक्त क्रम से बढ़ाते हुये १० गोली पर आये फिर घटाये। इस तरह रोग जब तक घट न जाये क्रमशः औषधि की मात्रा बढ़ाते-घटाते हुये सेवन करे। अम्लपित्त, विषम ज्वर, जीर्णज्वर, प्लीहा, दुस्साध्य यकृत विकार शोथ आदि भयंकर से भयंकर रोगों पर भी इस कल्प के द्वारा वैद्य विजय प्राप्त कर सकते हैं। इससे रोगी के शरीर में बल, वीर्य धातु तथा अग्नि की वृद्धि होती है। यह रसेन्द्र चिंतामणि का परमोत्तम योग है।

अब अशुद्ध ताम्रदोष परिहारार्थ कुछ उपायों को लिखकर इस ताम्र प्रकरण को समाप्त करते हैं।

(१) यदि ताम्रभस्म किसी कारण वश बनाने में अशुद्ध रह गई हो या पूर्ण तथा ताम्रपत्रों का शोधन न करते हुये भस्म बना डाली गई हो तो उस भस्म को व्यर्थ न फेंक कर उसे इस प्रकार से शुद्ध करले। अशुद्ध ताम्रभस्म को नीबू के रस में खरल कर गोला सा बना ले। सूरणकन्द या जिमीकंद में सुराख कर इस गोले को अन्दर भर दे। सूराख का मुख बन्द कर ऊपर से कपड़-मिट्टी कर पूर्णतया सुखाये पश्चात इसे गजपुट में फूंक दे, स्वांगशीत होने पर अन्दर से सब दोष रहित ताम्र भस्म को निकाल लीजिये।

अथवा—अशुद्ध ताम्रभस्म का एक लोहे की कलछी में रख आग पर यहां तक तपाये कि कलछी लाल हो जाय। फिर उसे गोमूत्र में बुझाये। इस प्रकार २० बार गोमूत्र में बुझाने से भी ताम्र भस्म की अशुद्धि निकल जाती है।

(१) यदि अशुद्ध ताम्र भस्म सेवन करने में आगई हो तो-

(अ) मक्खन के साथ मौक्तिक भस्म सेवन करावे।

वा (आ) चन्द्रोदय (चन्द्रोदय प्रक्रिया आगे लिखी है देखिये) का सेवन शहद के साथ करावे। अथवा—

(इ) सांवा (देव धान) का पतला-पतला भात बना कर तीन दिन तक खावे, और जब-जब प्यास लगे तब धनियां को पीस कर, मिश्री का चूर्ण मिला तथा इसी में यथावश्यक जल को मिला शर्वत-सा बना कर पीवे। इस प्रकार तीन दिन करने से, सेवन किये हुये अशुद्ध ताम्र का विकार शान्त हो जाता है। कहा है:—

मुनिवृंहि सितापानं धान्याकमूबा सितायुतम्।
ताम्रदोषमशेषं वै पिबन्हन्यादिन त्रयम्॥

॥ इति ताम्र प्रकरणम्॥

स्थाई ग्राहक बनने के नियम।

१—प्रत्येक स्थाई ग्राहक को अपना नाम पता साफ अक्षरोंमें लिख कर भेजना होगा। और १) पहले जमा करा देना पड़ेगा।

२—यह १) रुपया ग्राहक के नाम जमा रहेगा, जब वे ग्राहक नहीं रहेंगे तब रुपया वापिस कर दिया जायगा।

३—स्थाई ग्राहकों को सभी नई व पुरानी पुस्तकें पौने मूल्य में दी जायगी। डाकखर्च ग्राहकों को देना होगा।

४—स्थाई ग्राहकों को ग्राहक बनने के बाद प्रकाशित होने वाली सभी पुस्तकें लेनी होंगी।

५—नई पुस्तक प्रकाशित होते ही ग्राहकों को सूचना भेज दी जायगी और उसके बाद २ सप्ताह के अन्दर वी० पी० जायगी।

६—किसी सज्जनकी वी० पी० लौट जायगी तो उसका खर्च उनके नाम पर जमा किए हुये १) में से काट लिया जायगा। वी० पी० पारसल खर्च बाद देकर जो पैसे बचेंगे वे उन्हें भेज दिये जायेंगे। वी० पी० पारसल खर्च १) से ज्यादा होगा तो ग्राहक से वसूल किया जाएगा।

७—एक बार नाम कट जाने पर लौटाई हुई पुस्तकें लेने पर और वी० पी० खर्च के पैसे भेजकर पूरा १) जमा करा देने पर ग्राहक बना लिये जायगे।

८—डाकखर्च में बचत होने के ख्याल से एक रुपये से कम की पुस्तकें वी० पी० से नहीं भेजी जायगी।

९—स[illegible]र में कमीशन के बाद देकर दस रुपये से अधिक की पुस्तकें लेने को ग्राहक बाध्य नहीं होंगे।

१०—इस सम्बन्ध में सुविधा-जनक आवश्यक नियम समय २ पर घटाये-बढ़ाये जा सकेंगे। —मैनेजर।

अनुभूत योगमाला ग्रन्थमाला द्वारा प्रकाशित

उपयोगी पुस्तकें

१—राजयक्ष्मा—तपेदिक मिटाने के उपाय मू० ।)
२—दमा—श्वास को दूर करने के उपाय मू० ॥)
३—अर्श—बवासीर नष्ट करने के उपाय मू० ॥)
४—हरिचारित ग्रंथ—समस्त रोगों के सुलभ योग, ।=)
५—प्लीहा—तिल्ली की अपूर्व पुस्तक मू० ।-)
६—स्त्री रोग चिकित्सा—कीमत ॥)
७—सिद्धौषधि प्रकाश—(यन्त्रस्थ) मू० १॥)
८—व्रणोपचार पद्धति—घावों का इलाज मू० ।=)
९—सिद्धप्रयोग (प्रथम भाग) मू० १)
१०—सिद्धप्रयोग (द्वितीय भाग) मू० ॥)
११—वैद्यक शब्द-कोष—संस्कृत से हिन्दी में मू० ।)
१२—अश्मरी रोग चिकित्सा—पथरी रोग का वर्णन है मू० ।)
१३—मधुमेह—अपने विषय की एक ही पुस्तक है। मू० ।)
१४—औषधि गुण-धर्म-विवेचन (प्रथम भाग) मू० ॥)
१५—चिकित्सक व्यवहार विज्ञान—विषय नाम से ही प्रगट है, ।)
१६—भारतीय रसायन शास्त्र मू० ॥)
१७—पेटेंट औषधें और भारतवर्ष—(प्रथम भाग) मू० ॥)
१८—पेटेंट औषधें और भारतवर्ष—(द्वितीय भाग) मू० १)
१९—सरल रोग विज्ञान—निदान विषयक उत्तम ग्रंथ है। मू० ३)